आधुनिक

परिवहन

1954

आधुनिक परिवाहन

(यातायात एवं संवादवहन सम्बन्धी पुस्तक)

लेखक—

प्रो० सुधाकर पाण्डेय

एम० काम०, साहित्यरत्न

प्रकाशक—

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय,

पो० बक्स नं० ७०,

ज्ञानवापी, बनारस सिटी।

प्रथम संस्करण] १९५३ [मूल्य १॥)

प्रकाशक—
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय,
पो० बक्स नं० ७०,
ज्ञानवापी, बनारस ।

मुद्रक—
विद्यामन्दिर प्रेस लि०,
मान-मन्दिर, बनारस ।

इस पुस्तक के सम्बन्ध में

हिन्दी राष्ट्रभाषा किसी के प्रयास के बल पर नहीं, अपनी तपस्या के बल पर हुई है। आज सर्वत्र गला फाड़-फाड़ कर हिन्दी की महत्ता के सम्बन्ध में कबीर, तुलसी, सूर, जायसी, पद्माकर आदि का नाम लेकर उसी प्रकार की दिवालियेपन की वृति का विज्ञापन किया जा रहा है, जिस प्रकार कोई व्यक्ति इसलिए अपना हाथ सूंघने के लिए आगे बढ़ाता है कि उसके पूर्वजों ने पर्याप्त मात्रा में घी का सेवन किया था। हमारे अतीत के वैभव की गुणगाथा हिन्दी के सम्बन्ध में ही नहीं, सभी क्षेत्रों में, भारत ही नहीं, विश्व भर में गायी जाती है। वर्त्तमान में हाथ पर हाथ धरे भाग्य के सहारे बैठे रहना सोमनाथ के मन्दिर के उन पुजारियों की याद दिलाता है जिनके अतीत का प्रमाद भरत को ले डूबा। मेरी दृष्टि में वैसा ही संक्रमण काल आज उपस्थित है।

राष्ट्रभाषा के अन्तर्गत केवल विशुद्ध साहित्य ही का महत्व नहीं होता,अपितु सामान्य साहित्यकी भी महत्ता होती है। यही परि-वहन का कारण है कि अंग्रेजी विश्वभाषा के रूप में प्रयुक्त हो रही है। समय चुनौती लेकर माँ भारती के द्वार पर खड़ा है और उसके बरद पुत्र प्रमाद में मद-विभोर हैं। ऐसी परिस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति का यह धर्म हो जाता है कि वह प्राणप्रण से हिन्दी में समान्य साहित्य के सर्जन में जुट कर माँ भारती का भण्डार भरें। इन पंक्तियों के लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक द्वारा माँ भारती के मन्दिर की ओर श्रद्धा उन्मुख हो प्रयाण किया है।

परिवाहन के सम्बन्ध में सम्भवत: यह अपने ढंग की अकेली और प्रथम पुस्तक है । आरंभ का महत्व होते हुए भी कोई व्यक्ति पूर्ण नहीं हो पाया है । मैं अपने को कैसे इसका अपवाद घोषित कर सकता हूँ । शैक्षणिक साहित्य तथा सामान्य पढ़े लिखे लोगों को ध्यान मे रखकर इस पुस्तक का निर्माण हुआ है । साथ ही इस बात का प्रयास किया गया है कि परिवाहन सम्बधी ज्ञान पाठक को हो जाय । प्रयास की सफलता या विफलता का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि मैं 'कर्मणेवाधिकारस्ते' पुस्तक के सिद्धान्त में विश्वास करनेवाला आदमी हूँ।

मित्रों ने इस कृति के प्रकाशन में जिस प्रकार मेरा साथ दिया है उससे यह विश्वास होने लगा है कि स्वार्थियों की इस वस्ती में परमार्थी भी बसते हैं । इस प्रसंग में सर्व श्री विश्वनाथ पाण्डेय राहगीर, एस० पी० त्रिपाठी, बालकृष्ण सिंह, विष्णु चन्द्र शर्मा, रामनारायण सिंह, कृष्णकान्त उपाध्याय, योगेश्वर त्रिपाठी, कामेन्द्र आदि का नाम भुलाया नहीं जा सकता ।

अनुगृहीत हूँ बेरी द्वय सर्व श्रीकृष्णचन्द्र बेरी तथा ओम्प्रकाश बेरी का जिनकी मुद्रण क्षमता इस कार्य में मेरे साथ थी । और कुछ इस प्रसंग में कहना नहीं है ।

सुधाकर पाण्डेय

मास्टर साहब को

जिन्हें

शिक्षा जगत के लोग

श्री कृष्णदेव प्रसाद गौड़

के नाम से जानते हैं

अनुसूची—

———

१

अतीत

लोक और पगडंडी के विकास की कहानी

मानव के विकास की कहानी का अध्ययन इस बात को प्रकट करता है कि आज जो बौद्धिक प्रगति सभ्यता के क्षेत्र में हुई है, वह उसकी कार्य-पटुता का जीवित उदाहरण है। उसने अपनी बुद्धि के बल पर तथा अपने अनुभव के आधार पर इतनी अधिक उन्नति प्रत्येक क्षेत्र में की है, जो अपने अतीत के प्रति उसे स्वयं आश्चर्य-चकित कर देती है।

मानव अपने प्रगति के लिए संघर्ष करता हुआ निरन्तर आगे बढ़ता रहा है। इस उन्नति के मूल में सहयोग की भावना का उपयोग उसके लिये सर्वाधिक फलवान् प्रमाणित हुआ है।

प्रागैतिहासिक युग में उसने अपने आपसे सहयोग किया; प्रकृति सदैव वरदान रूप में उसकी सहायिका तो रही ही है; फिर उसने मनुष्य का सहयोग लिया और यहाँ तक कि पशु-पक्षी एवं कंकड़-पत्थर और लोहे आदि की महत्तामात्र ही उसने स्वीकार नहीं की, बल्कि अपनी उन्नति के लिए उसका उपयोग भी सचेष्ट होकर प्राणपण से किया।

सहयोग का मूल एक दूसरे को समझने, निकट आने और मिलने पर ज्ञात होता है। आज की तरह प्रारंभ में उसके पास साधन नहीं थे कि वह अधिक से अधिक लोगों से परिचय प्राप्त कर सके, मिल सके और अपनी उन्नति के लिए रास्ता बना

सके । आज के युग में तो हम उस युग की कल्पना भी नहीं कर सकते, जब मानव का लघु समुदाय जंगलों, पहाड़ों, घाटियों, नदियों एवं हरे-भरे घास के मैदानों को छानता, रौंदता एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचता रहा होगा, अपने लिए, अपनी उन्नति के लिए ।

बार-बार एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के कारण उसे अनेक रास्तों से गुजरना पड़ा होगा । अनुभव ने मानव को बताया कि किधर से जाना अधिक सुगम है । उसी ओर से आते-जाते धरती पर लीक और पगडण्डी का निर्माण हुआ होगा । पर आज का मानव पगडण्डी पर चलने वाला नहीं रहा, और न वह प्रागैतिहासिक युग ही रहा । आज हमारे सामने सड़क है, सड़क पर आदमी, रिक्शा और बैलगाड़ी से लेकर मोटर तक का चलते देखना आज के सभ्य समाज में साधारण-सी बात है ।

धरती पर सर्वत्र सभ्यता का उदय एक साथ नहीं हुआ । आज भी संसार के कुछ अंगों में प्रागैतिहासिक सभ्यता विराजमान है, कुछ अंग सभ्यता के शिखर पर हैं, कुछ अंग प्रगति के पथ पर हैं । इस प्रकार आवागमन के सभी साधनों, का दर्शन आज के संसार में अब भी संभव है ।

सभ्यता के इस विकास-क्रम की विचित्रता कभी-कभी तो एक ही देश में दिखाई पड़ती है । आज भी भारत के सुदूर ग्रामों में ऐसे व्यक्ति मिल जायेंगे जो रेल और मोटर पर सवार नहीं हुए ।

यहाँ यह समझ लेना आवश्यक हो जाता है कि आधुनिक युग में यातायात के जिन साधनों के विकसित रूप का उपयोग सभ्य-समाज करता है, उनका अतीत किस प्रकार का था ।

प्रारंभिक युग में मानव सर्वाधिक मानव के निकट या पशु के निकट था । उसके सामने जब सहयोग का प्रश्न उठता था तो स्वाभाविक रूप से उसकी दृष्टि इन्हीं की ओर जाती थी । प्रारंभ में पगडण्डियाँ बनीं, उस पर अस्वस्थ, निर्बल एवं सम्पन्न व्यक्ति के लिए सवारी के रूप में व्यक्ति या पशुओं का उपयोग किया गया होगा । आज भी पहाड़ों पर इन्सांन, इन्सांन को ढोते हुए देखा जा सकता है । घोड़े की सवारी तो विश्वव्यापी है । और सग्गड़ और रिक्शा खींचते हुए आदमी अब भी नगरों एवं व्यापारिक मण्डियों में देखे जा सकते हैं ।

इसके बाद अपने इस प्रयोग को मानव ने और अधिक उपयोगी बनाया । पशुओं से सवारी खिंचवाने का प्रयत्न समाज में आरम्भ हुआ । बैलगाड़ी, ऊँटगाड़ी, भैंसा-गाड़ी, एक्का, टमटम आदि का उपयोग भी उसने किया और अभी तक अपनी आवश्यकता एवं सभ्यता के विकास के अनुसार उसका उपयोग वह करता जा रहा है ।

तीसरी अवस्था वह आती है जब जड़ वस्तुओं से व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की ओर अधिक झुकता दिखाई पड़ता है और यह झुकाव इतना अधिक बढ़ गया है कि व्यक्ति बिल्कुल उन पर निर्भर रहने लगा । इस युग को मशीनों का युग कहते हैं । यद्यपि सदैव से यातायात का नियन्ता एवं संचालक मानव रहा है। मशीनों की ओर मानव-समाज इसलिए अधिक प्रवृत्त हुआ कि उससे उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति जितनी अधिकमात्रा में हो सकती है, उतनी वह स्वयंअपने हाथ द्वारा नहीं कर पाता ।

मानव ने जड़ पदार्थों से मशीनों का निर्माण किया । जीवन के सभी क्षेत्र उसकी इस कार्य-शक्ति से अनुप्राणित हुए तथा आज के जीवन पर उनका प्रभाव इतना अधिक पड़ा कि व्यक्ति यंत्रों से तदात्म्य स्थापित कर बैठा ।

ऐसे तो मानव जीवन ही एक महायात्रा है, पर जीवन में यात्राओं का महत्त्व इतना अधिक है कि व्यक्ति उससे अलग रह ही नहीं सकता ।

आर्यों का आदि आगमन भी एक यात्रा ही मानी जाती है; जीवन को विकसित, उन्नयित एवं संवर्धनशील बनाने के लिए । रामायण और महाभारत काल में भी यात्राओं की महत्ता इसी बात से प्रमाणित हो जाती है कि राम की यात्रा; पाण्डवों की यात्रा, कृष्ण का विचरण, महाभारत के लिए देश के विभिन्न भागों से लोगों का कुरुक्षेत्र में आगमन इस तथ्य के प्रमाण हैं कि यात्राओं की उत्पत्ति नयी नहीं; इसका सम्बन्ध मानव के साथ ही विश्व में स्थापित हो गया था ।

सिकन्दर की इतनी लम्बी यात्रा; बौद्ध ग्रंथ जातक में वर्णित पण (व्यापार) के लिए यात्राएँ उस युग में यात्रा का उद्बोध कराती हैं, जब से इतिहास का तारतम्य रूप मिलता है । शक, शिथियन, हूण और मुग़ल भी इस देश में आये । उस युग में यात्रा के परिवाहन यंत्र चालित न होते थे । काठ की नाव होती थी । हाथी, घोड़ा, ऊँट, बैल आदि होते थे । इनकी स्थापना सवारी के रूप में प्रागैतिहासिक

युग में हुई और आज तक चलती चली आ रही है । डाक आदि भी इन्हीं के द्वारा भेजी जाती रही है ।

यह यात्रा केवल धरती तक ही सीमित नहीं रही । सागर पार कर भारत में पदार्पण करने वालों का इतिहास बहुत पुराना है । फाहियान और ह्वेनच्यांग की यात्राएँ संस्कृति और इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों का निर्माण करती हैं । चीन की दीवार हजारों वर्ष बाद आज भी सभ्यता, संस्कृति और व्यापार की अभिवृद्धि के लिए द्वार खोले खड़ी है ।

ये तो उस युग की बातें हैं जब मानव यंत्रीकरण की ओर अभिमुख नहीं हुआ था । आधुनिक सभ्यता, संस्कृति तथा उन्नति के लिए यंत्रों ने द्वार खोला, श्रम-विभाजन एवं विशिष्टीकरण की भावना ने प्रगति को पंख लगाया और आज अभिनवीकरण की भावना उसे द्रुतगति से लिए बढ़ी चली जा रही है ।

यह बात न केवल एक क्षेत्र के सम्बन्ध में कही जा सकती है अपितु यह सार्वभौम सत्य सभी क्षेत्रों को अनुप्राणित किए हुए है । नये युग के नये मानव ने परिवाहन के सम्बन्ध में भी अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की । समय नश्वर-मानव की सबसे बड़ी सम्पत्ति है । उसकी रक्षा उसके लिए उतनी ही आवश्यक है, जितनी किसी भी धन की । इसलिए वह द्रुतगामी साधनों का आविष्कार करता चला जा रहा है ।

जिस दिन संसार के लोग अपने आविष्कारों से पूर्ण संतोष लाभ कर लेंगे, उस दिन प्रगति के चरण अपने आप रुक जायेंगे । किन्तु मानव रुकने वाला नहीं; चिरन्तन गतिवान् प्राणी है । उसकी गति निरन्तर द्विगुणित होती चली जा रही है । इसी गति ने परिवाहन के आधुनिक साधनों को जन्म दिया । सायकिल, मोटर, रेल, जल यान, वायु यान आदि के पथ का निर्माता मानव आज भी गतिशील है और ये ही परिवाहन के साधन आधुनिक परिवाहन के अन्तर्गत आते हैं यद्यपि इनकी परम्परा मानव के साथ आरंभ होती है ।

२

आवश्यकता और महत्ता

आवश्यकता

सभ्यता, संस्कृति, ज्ञान एवं व्यापार सभी की श्री वृद्धि तब तक असम्भव है, जब तक भिन्न-भिन्न स्थानों के व्यक्ति एक दूसरे से न मिलें। इस मिलन का परिणाम होता है अभ्युदय। क्योंकि मिलने वाले एक दूसरे से कुछ सीखते हैं, कुछ लेते हैं, कुछ देते हैं। जिस प्रकार व्यक्ति पैदा होने पर सभी कुछ पहले से ही सीख कर नहीं आता, उसी प्रकार बिना एक दूसरे से सम्पर्क-स्थापित किये व्यक्ति सभ्य नहीं हो सकता। विभिन्न समाजों में विभिन्न प्रकार के गुण होते हैं, जिनके मिलने से गुणों का आदान-प्रदान होता है। यह सभ्यता का आदान-प्रदान दो समाजों को परस्पर निकट ला देता है, जिससे प्रेम की भावना की वृद्धि समाज में होती है और मानव विश्व-बन्धुत्व की ओर आगे बढ़ता है। अंग्रेजी भाषा के विश्वव्यापी होने का कारण यही है कि अंग्रेजी भाषा-भाषी संसार के विभिन्न समाजों में परिव्याप्त होकर अपने गुणों से दूसरे समाज को प्रभावित करते रहे। फल यह निकला कि अंग्रेजी आज विश्व की भाषा है। इसी सम्पर्क-स्थापन के कारण बौद्ध, ईसाई और मुस्लिम संस्कृतियाँ सुदूर व्यापिनी हुईं।

जो जिस कार्य-कला में निपुण होता है, वह उस कार्य को अत्यन्त सुन्दरतापूर्वक और अधिक परिमाण में कर पाता है। इसी तथ्य के आधार पर समाज में श्रम-विभाजन का जन्म हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि व्यक्ति के उत्पादन करने की क्षमता बढ़ी। इस क्षमता-वृद्धि का परिणाम अधिक उत्पादन था। अधिक

उत्पादन होने से वस्तुएँ सस्ती मिलती हैं। सस्ती वस्तुओं से व्यक्ति को उतनी ही आय से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति का अवसर मिलता है, जिसका परिणाम यह होता है कि वह समाज और व्यक्ति अपना आर्थिक कल्याण करता है। इस मंगल-कामना की पूर्ति असफल हो जाय यदि विशेष समाज के लोगों द्वारा उत्पादित वस्तु वहीं पड़ी रहे।

आवश्यकता इस बात की पड़ती है कि उन सभी उत्पादित वस्तुओं का उपयोग उन लोगों के लिए सुलभ हो, जो दूसरे प्रकार के उत्पादन-कार्य में लगे हुए हैं। भारत-वर्ष जूट का उत्पादन संसार में सर्वाधिक सुचारु ढंग से करता है। यदि यह भारत में ही पड़ा रह जाय, तो उसका मूल्य भले ही और सस्ता क्यों न हो जाय, भारतके रहनेवालों की अन्य आवश्यकताएँ पूरी न हो पायेंगी और जूट मात्र से ही उनका काम नहीं चल सकता। यही बात घड़ियों के लिए स्वीटजरलैण्ड के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। दोनों द्वारा उत्पादित अच्छी और सस्ती चीजें निरर्थक हो जायेंगी इसलिए आवश्यकता इस बात की पड़ती है कि दोनों स्थान से सामान एक दूसरे स्थान पर आयें और जाँयें।

आदान-प्रदान की यही क्रिया दोनों देशों के लिए कल्याणकारी होगी।

इस प्रकार स्थान की दूरी निकटता में परिवर्तित होती है। इस दूरी में समय भी प्रमुख रूप से भाग लेता है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक आने-जाने में समय का जितना ही कम उपयोग होगा, उतना ही अधिक लाभ एक दूसरे का सम्भव है। पर काल की दूरी समाप्त करने में निश्चय ही उस पर पड़ने वाले व्यय का भी ध्यान रखना ही होगा।

इस प्रकार विचारों के आदान-प्रदान के लिए, व्यक्तियों की सेवाओं के आदान-प्रदान के लिए, प्राकृतिक वातावरण में परिवर्त्तन के लिए, वस्तुओं के आवागमन के लिए, परिवाहन की अत्यन्त आवश्यकता है, क्योंकि उसके अभाव में आज का मानव वह नहीं रह पायेगा, जो आज है या जो कल होना चाहता है। इसलिए परिवाहन की आवश्यकता नितान्त अपेक्षित है।

जो भी साधन इस व्यापक आदान-प्रदान के लिए समय और स्थान की सीमा कर करते हैं उन्हें आज का समाज परिवाहन की संज्ञा देता है।

महत्ता

एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचारों एवं व्यक्तियों का परिवाहन उस स्थान के लिए इस अर्थ में अत्यन्त मंगलकारी होता है कि उस स्थान के लोग भी उन व्यक्तियों के गुणों एवं विचारों से अपने ज्ञान की अभिवृद्धि करते हैं। यह ज्ञान की अभिवृद्धि उनके जीवन को उन्नत बनाने की प्रायोगिक विद्या का द्वार खोलती है। उदाहरण के रूप में आज स्वतंत्र भारत की उस स्थिति की कल्पना की जा सकती है, जिस परिस्थिति में बाँध आदि के निर्माण के लिए विदेशों के चतुर एवं कुशल शिल्पी यहाँ आकर अपनी सेवाएँ प्रस्तुत कर देश को उन्नत बनाने में सहायक हो रहे हैं। उनका आगमन परिवाहन की कृपा पर ही निर्भर करता है। साथ ही यदि किसी व्यक्ति के लिए कोई स्थान स्वास्थ्य के लिए ठीक नहीं जँचता या किसी व्यक्ति को, जिस कला में वह निपुण है, उस कला के विकास के लिए वह स्थान जहाँ वह रहता है, उचित नहीं प्रमाणित होता तो आवश्यकता इस बात की आ पड़ती है कि वह जो रुग्ण है स्वास्थ्यप्रद स्थानों की ओर गमन करे या अपनी शिल्प-कला को विकसित करने के लिए उस स्थान की शरण ले जिस स्थान पर उसकी शिल्प-कला महत्ता प्राप्त कर सकेगी। परिवाहन के अभाव में या द्रुतगत परिवाहनके अभाव में यह असम्भव हो जायेगा। एक और भी उदाहरण लिया जा सकता है। यथा कोई व्यक्ति अत्यन्त रुग्ण है। उसकी कोई दवा पटना में न मिलकर कलकत्ता में उपलब्ध हो सकती है। यदि वह दवा मिल जाय तो उसके जीवन की रक्षा हो सकती है। वह व्यक्ति स्वजन-स्नेहियों के लिए सम्पत्ति है ही, साथ ही समाज को भी उससे आशा है। ऐसी स्थिति में परिवाहन का साधन यदि न हो तो उस अमंगलकारी स्थिति की सहज कल्पना की जा सकती है। इस प्रकार विचारों को प्रभावित कर, लोगों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाने का मार्ग खोलकर और व्यक्तियों के लिए वांछित सामग्री लाने का द्वार खोल कर समाज और व्यक्ति दोनों के लिए परिवाहन मंगल की सृष्टि करता है।

एक स्थान पर उत्पादित छोटी-बड़ी सभी सामग्रियाँ दूसरे उपयोगी स्थान पर पहुँचने के कारण सामग्री की उपयोगिता बढ़ती है, आवश्यकता की पूर्ति होती है

और यह तभी सम्भव है जब कि उन सामग्रियों के पहुँचने का साधन हो ।

जब समाज में आवागमन के साधन वर्त्तमान रहते हैं, तो विशेष क्षेत्र के लोग विशेष प्रकार के कार्यों में ही विशिष्टता प्राप्त करते हैं, जिससे उस कार्य में दक्षता और निपुणता प्राप्त होती है । चीजें सस्ती पड़ती हैं । इसका लाभ दूसरे क्षेत्र के लोग भी उठाते हैं ।

एक स्थान पर कोई मूल्यवान वस्तु होती है, दूसरे पर कोई । इनके संयोग से एक तीसरी अच्छी वस्तु का, जो समाज के लिए अत्यधिक प्रमाणित हो सकती है, एक स्थान पर एकत्र होने से निर्माण सम्भव है । कच्चे माल जब एक स्थान पर एकत्र होते हैं, तभी जाकर तीसरी वस्तु का निर्माण सम्भव है । उदाहरण के रूप में मशीन, रूई, कोयला तथा श्रम सभी एक स्थान पर बड़े सौभाग्य से प्राप्त होता है । पर जब वे आवागमन के साधनों की सहायता से एकत्र कर दिये जाते हैं तो उस स्थान पर उस वस्तु का उत्पादन होने लगता है । कानपुर का लाभ इसलिए हुआ कि वहाँ कपड़े की मिलों के लिए आवागमन के साधन कच्चा माल जुटा देते हैं । इसका परिणाम यह भी होता है कि जो कच्चा माल उत्पादन के क्षेत्र में आवागमन की असुविधा के कारण नहीं जा पाता, उसका मूल्य उतना नहीं लग पाता । इस प्रकार आवागमन के साधन उस क्षेत्र को सम्पन्न बनाने में सहायक प्रमाणित होते हैं ।

विज्ञान के नये प्रयोग यथा रेफ्रिजरेशन तथा कोल्ड-स्टोरेज से युक्त सवारियों के कारण कच्चे माल, जैसे फल, तरकारी आदि को भी ऐसे क्षेत्रों में भेजा जा सकता है, जहाँ वे चीजें उत्पन्न नहीं होतीं और उनसे पहले की अपेक्षा अधिक लाभ उठाया जा सकता है । इस प्रकार आवागमन के साधन आय की वृद्धि का भी मार्ग खोलते हैं ।

आज के युग में एक ही वस्तु के अनेक देश या व्यक्ति उत्पादक होते हैं । उनमें आपस में प्रतिस्पर्द्धा होती है । एक ही स्तर का माल यदि दो व्यापारियों के पास है तो वह व्यापारी अधिक क्षेत्रमें अपने व्यापार का प्रस्फुटन कर सकता है, जिसके पास आवागमन का अधिक सुन्दर एवं वैज्ञानिक साधन है । इस प्रकार आवागमन के साधन किसी संस्थान द्वारा उत्पादित वस्तुओं के लिए बाजार बनाते हैं ।

युद्ध के समय तो इनकी महत्ता इतनी अधिक बढ़ जाती है कि यदि सैनिकों के लिए आवागमन के साधन सुस्थिर, सहज, सरल तथा अच्छे मिल जायँ तो युद्ध में विजय सरलतापूर्वक प्राप्त की जा सकती है। संकट की घड़ियों में पर्याप्त वस्तु सहायता के रूप में भेजी जा सकती है। युद्ध के लिए आवागमन की महत्ता इसी से स्पष्ट हो जाती है कि हारने वाले सैनिक युद्ध-स्थल छोड़कर भागते समय आवागमन के साधन नष्ट करते हुए भागते हैं, ताकि आक्रमक सेना सरलतापूर्वक आगे न बढ़ सके। इस प्रकार सामरिक दृष्टि से भी इनका अत्यन्त महत्व है।

विश्व में शांति-स्थापन की आवश्यकता आज जितनी अनुभव की जा रही है; उतनी पहले नहीं। संसार की सबसे बड़ी समस्या शांति-स्थापन में भी इनका योगदान सर्वाधिक है, क्योंकि यदि मार्ग न रहे, आवागमनके साधन न हों तो किसी भी प्रकार यह सम्भव नहीं हो सकता कि शीघ्र से शीघ्र विश्व के लोगों के मध्य सम्पर्क स्थापन कर शांति के लिए कदम उठाया जाय। क्योंकि आज आवागमन की सुविधा के कारण विश्व एक परिवार की ग्रंथि में बंधने जा रहा है।

इस प्रकार सैद्धान्तिक, व्यापारिक, सामाजिक, वैयक्तिक, सामरिक एवं विश्व-कल्याण; सभी दृष्टियों से आवागमन की महत्ता अपरिमेय एवं अभूतपूर्व है क्योंकि इससे समाज का सांस्कृतिक, आर्थिक एवं सामाजिक मंगल की सृष्टि में अत्यधिक योगदान मिलता है।

३

परिवाहन

मानव जिस वातावरण में पलता है, उसी वातावरण से प्रेरणा ग्रहण कर आगे बढ़ता है, अपने उत्थान के लिए। उत्पादन के लिए प्रकृति का चिरन्तन अजस्र श्रोत मानव को वरदान के रूप में प्राप्त है। वह धरती पर इसलिए चलता है, आकाश की ओर इसलिए देखता है कि वायु, पानी, गर्मी, प्रकाश उसे वहाँ से प्राप्त होता है; समुद्र की अनन्त जलराशि की ओर वह इसलिए देखता है कि धरती के अन्य अंगों के बीच सम्पर्क स्थापन होता है।

इसी प्रकार मानव का कार्य-क्षेत्र आकाश, धरती और समुद्र तीनों हैं। सम्पर्क स्थापन के लिए तीनों उसके सामने प्रश्नचिह्न बनकर खड़े होते हैं। मानव ने अपनी प्रगति न रुकते हुए देखने का अभ्यास कर लिया है। मार्ग में बाधा आती है, अड़चने पड़ती हैं, व्यवधान उपस्थित होता है; पर उसका अजेय संकल्प उसे आगे बढ़ाता रहता है। इस प्रगति में बुद्धि उसकी सहायता करती है। अपनी बुद्धि द्वारा वह कठिनाइयों का मान-मर्दन करता हुआ आगे बढ़ता है।

मानव के अभ्युदय के लिए आवागमन के साधन जो अत्यधिक महत्व पूर्ण हैं, उसके लिए भी तीनों क्षेत्रों में उसने प्रयास किया और अत्यधिक सफलता प्रारंभिक विकासकालीन युग में ही उसने प्राप्त की।

तीनों क्षेत्रों में उसने आवागमन के साधनों का निर्माण ही नहीं किया अपितु उसे इतना सरल, द्रुतिगामी एवं उपयोगी बनाया कि आज प्रत्येक क्षेत्र में अपनी सुविधा एवं आवश्यकतानुसार उसने द्रुतगामी साधन तैयार कर लिये हैं। आज

विश्व का प्रत्येक सभ्य-नागरिक इस बात से परिचित हैं कि आकाश की सीमा वायुयान नापते हैं, धरती पर मानव द्वारा निर्मित सड़कें और नदियाँ तथा नहरें दूरी को निकट ला देती हैं, तथा समुद्र पर चलनेवाले विशालकाय जहाज दो स्थानों को एक सूत्र में बाँध कर कड़ी का काम करते हैं।

इस प्रकार आवागमन के तीन मार्ग प्रस्तुत होते हैं।

१—स्थल मार्ग।

२—जल मार्ग।

३—आकाश मार्ग।

आधुनिक युग में तीनों मार्गों द्वारा यंत्र-सुसज्ज परिवाहन स्थानों की दूरी कम करते रहते हैं या मानव की उन्नति के लिए उन्मुक्त रूप से द्वार खोलते रहते हैं।

स्थल-मार्ग

स्थल-मार्ग उन मार्गों को कहते हैं जो धरती पर हैं। लीक, पगडंडी, कच्ची सड़कें और पक्की सड़कें धरती पर ही होती हैं, पर आधुनिक आवागमन के साधनों के अन्तर्गत सड़कों और रेलों की गणना होती है। नदियों एवं नहरों का भी उपयोग आवागमन के साधन के रूप में बहुत प्राचीनकाल से होता चला आया है और आधुनिक साधनों के अन्तर्गत भी इनका उपयोग होता है। स्टीमर, छोटे जलयान इनके भीतर परिवाहक का कार्य करते हैं और इन्हें वाष्प तथा विद्युत् चालित स्टीमर तथा जलयानों को स्थल-मार्ग के भीतर ही सन्निविष्ट करना अधिक वैज्ञानिक होगा क्योंकि वे धरती की गोद में हैं, समुद्र की भाँति उन्मुक्त नहीं।

सड़कों पर मोटरें, बसें, कार, टैक्सी, आदि आधुनिक यातायात के वाहन चलते हैं, जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर सम्पत्ति, व्यक्ति और सामग्री को ले आते और ले जाते हैं। नदियों एवं नहरों में भी छोटे स्टीमरों एवं नावों द्वारा व्यक्ति और सामान का आवागमन होता है।

नदियों एवं सड़कों की महत्ता आवागमन के साधन के रूप में विश्व में पहले से ही स्वीकार की जा चुकी थी, पर प्रथम युद्ध तथा द्वितीय युद्ध ने सड़कों की महत्ता और भी अधिक प्रमाणित कर दी है। आज विश्व का प्रत्येक राष्ट्र अपने

देश में सड़कों की सुचारु रूप से व्यवस्था करने में संलग्न दीख पड़ता है । भारत भी इसका अपवाद नहीं, जैसा पंचवर्षीय योजना से स्पष्ट झलकता है ।

नदियों द्वारा स्थानीय आवागमन तो होता ही व्यक्ति और निकट से सामान लाने, ले आनेवाले तो आते ही जाते हैं, उनकी ओर भी लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ है ।

यद्यपि सड़कों तथा नदियों का उपयोग सर्वप्रथम मानव ने आवागमन के साधन के रूप में किया, पर आज तक उनकी उपयोगिता की महत्ता अक्षुण्ण बनी हुई है ।

धरती पर अन्य साधन जो लम्बी यात्रा के लिए तथा भारी बोझ के स्थान्तरण के लिए अत्यधिक उपयोगी प्रमाणित हुआ है, वह है रेल-मार्ग । सन् १८२५ के पश्चात् विश्व में रेलों का विकास इसकी उपयोगिता के कारण अत्यन्त द्रुत-गति से हुआ है । प्रारम्भ में रेलों का उपयोग सवारी गाड़ी के रूप में अधिक होता था किन्तु ज्यों-ज्यों समय बीतता गया और इसकी उपयोगिता समझ में आने लगी त्यों-त्यों इसका उपयोग सामान आदि ले जाने के लिए बढ़ने लगा और देशों के भीतर रेलों का जाल सा बिछ गया, जिससे विश्व के प्रायः सभी देशों ने लाभ उठाया। सांस्कृतिक, सामाजिक, व्यापारिक, सामरिक एवं प्रशासन-संबंधी देश की एक सूत्र बद्धता रेलों की बहुत बड़ी देन है । विशेष कर उन देशों के लिये जो एक महाद्वीप के समान विस्तृत हैं, उनको एक इकाई में बाँधने का अत्यन्त सुन्दर कार्य इन्होंने सम्पन्न किया है ।

इनकी महत्ता इसी बात से जानी जा सकती है कि इनके नियमन के लिए विधान तक का निर्माण प्रत्येक राष्ट्र को करना पड़ा । रेलों का उपयोग सवारी गाड़ी एवं मालगाड़ी या मिश्रित गाड़ी के रूप में किया जाता है ।

रेलें राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों होती हैं । राष्ट्र के भीतर जब रेल चलती है तो वह उस राष्ट्र की कही जाती है । कभी-कभी आपस के सहयोग से इस बात का प्रबन्ध कर लिया जाता है कि दो या दो से अधिक देश आपस में सहयोग करके रेल यातायात अपने देशों के बीच करने का समझौता कर लेते हैं । ऐसी रेलों की व्यवस्था अन्ताराष्ट्रिय समझी जाती है ।

नगरों में सवारी के उपयोग के लिए ट्राम का प्रयोग किया जाता है। जो रेलों की ही भाँति पटरियों पर चलती हैं किन्तु ये बिजली के तारों से जो ऊपर लटके रहते हैं, चालित होती हैं। बड़े नगरों में सवारी यात्रा के लिए इनका उपयोग होता है। भारत में, कलकत्ता, बम्बई और दिल्ली तथा मद्रास में ट्रामें चलती हैं। ये सवारी ढोने के लिए सबसे सस्ती पड़ती हैं।

स्थल के आवागमन के साधन के रूप में इसका महत्व अत्यन्त अधिक है। रेलोंने मानव की उन्नति में पर्याप्त सहायता पहुँचायी है।

जल-मार्ग

अब तक आविष्कृत यातायात के साधनों में सर्बाधिक सस्ता साधन जल-मार्ग है। इसके अन्तर्गत सागर पर चलनेवाले तथा उन नहरों पर चलनेवाले साधनों का अध्ययन किया जाता है, जो दो समुद्रों को काट कर एक में मिला देती हैं। पानी के जहाज संसार के एक कोने से दूसरे कोने तक लोगों की सभ्यता-संस्कृति पहुँचाने में सहायक सिद्ध हुए हैं। कहना न होगा कि यूरोप की व्यापारिक सत्ता इन जहाजों के बल पर संसार में परिव्याप्त हुई थी। इन्हीं के द्वारा उन्होंने संसार के कोने-कोने के राष्ट्रों को अपना बाजार बनाया।

आरंभ में समुद्रों में विशालकाय पोतों का उपयोग होता था। भारत में तो बौद्धकाल में इनका प्रयोग पर्याप्त रूप से होता था। बुद्ध धर्म तथा संस्कृति के संदेशबाहक इन्हीं जल-पोतों द्वारा चीन, जापान, तक पहुँचे थे। अंग्रेज भी भारत में इन्हीं के द्वारा आये, पर आधुनिक यातायात के अन्तर्गत वाष्पचालित जहाज आते हैं जिनका प्रारंभ १८वीं शती से ही विश्व में आरंभ हो गया था। इंगलैंड इस क्षेत्र में विश्व का नेता रहा है, प्रथम युद्ध तक।

इन जल मार्गों के द्वारा भी आवागमन के साधन सुगम, सस्ते, सरल तथा अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

आकाश मार्ग

पौराणिक ग्रंथों में उड़न-खटोलों की चर्चा तो मिलती है। आधुनिक युग में आकाश में वायुयान के नाम से उड़न-खटोले हवा को चीरते हुए मानव की आवश्यकता पूर्ति के उपादान के रूप में दिखायी पड़ते हैं।

प्रारंभ में ये सैनिक और सवारी के काम के उपयोग में ही आते थे। फिर भी जिस द्रुतगति से वायुयानों का निर्माण हुआ है या हो रहा है, उससे यह आवागमन के अन्य साधनों की भाँति ही मानव को उन्नत बनाने में सहायक हुआ है।

ये आवागमन के सर्वाधिक द्रुतगामी साधन हैं। युद्ध में ये सामान, सैनिक और व्यक्ति सभी के लिए परिवाहक के रूप में उपयुक्त हुए हैं। आवागमन के साधनों में आज इनकी सामारिक महत्ता सर्वाधिक है।

अब तो डाक, दवा एवं अन्य आवश्यक छोटी वस्तुएँ इनके द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजी जा रही हैं। सवारियों के उपयोग में तो ये पहले से ही आ रही हैं। प्रथम विश्व-युद्ध के बाद इनका प्रयोग बढ़ा है और असामान्य स्थिति में; यथा अकाल, सामरिक संकट आदि में इनके द्वारा परिवाहन सम्बन्धी की गयी सेवाएँ अन्यतम हैं।

सड़कें

यद्यपि सड़कें प्राचीनतम यातायात का साधन रही हैं किन्तु १९वीं शताब्दि में रेलों के व्यापक प्रयोग के कारण इनकी महत्ता यातायात के साधन के रूप में दब सी गयी थी। केवल लोग टमटम, बग्घी, एक्का, बैलगाड़ी आदि के लिए ही सड़को का उपयोग करते रहे।

आधुनिक विश्व का सर्वप्रथम औद्योगिक देश इंगलैण्ड ही है। वहाँ भी यही स्थिति हुई। यद्यपि भारतवर्ष में रेलों की उतनी अधिक व्यापकता न होने के कारण ग्रामों के अनेक क्षेत्र रेल के लाइन की परिधि में न पड़ सके इसलिए सड़क की यात्रा का महत्व उतना कम नहीं हुआ कितना कम विश्व के उन औद्योगिक देशों में हुआ जहाँ पर रेलों का जाल-सा बिछ गया है।

परिवाहन के पुराने साधन थोड़ी दूरी की सवारी यात्रा या कुछ छोटी सीमातक माल ढोने के कार्य में ही लाये जा सकते थे; क्योंकि एक तो उनकी शक्ति सीमित, दूसरे लम्बी यात्रा के वे सर्वथा अनुपयुक्त तथा तीसरे उनपर खर्च अधिक पड़ता था। इसलिए ऐसा दृष्टिगत होने लगा था उन देशों में जो औद्योगिक प्रगति के पथ पर काफी अग्रसर हो चुके थे सड़कों का महत्व व्यापार, उद्योग की उन्नति में नहीं के बराबर होता जा रहा है। रेलों का महत्व सर्वत्र परिव्याप्त हो गया था। टेलफोर्ड और मैकडम जैसे विश्वविख्यात सड़क की उन्नति के प्रयोगकर्त्ता इंजीनियरों के सुन्दर प्रयत्न पर पानी फिर रहा था क्योंकि औद्योगिक क्रान्ति सर्वत्र व्यापक रूप से अपना प्रभाव दिखा रही थी। लोग व्यापारिक एवं औद्योगिक उन्नति के लिए सस्ते से सस्ता और अतिद्रुतगामी परिवाहन चाहते थे। वर्तमान सदी के आरंभ में मोटर-गाड़ियों का वैयक्तिक उपयोग सड़कों पर होता दिखने लगा। उसमें परिवर्तन, परिवर्द्धन, संशोधन हुए और सड़क पर टुक-टुक चलने वाली प्रारम्भिक कारों ने पुनः सड़कों का भाग्य पलट दिया। आशा की ज्योति सड़कों की श्रीवृद्धि का संदेश लेकर आयी और सड़कों की महत्ता अन्तर्देशीय-यातायात में इतनी अच्छी तरह स्थापित हुई कि आज सर्वत्र मोटर-कारें, बसें अपनी विजय-यात्रा की कहानी सड़कों पर कहती चलती हैं और जितने व्यापक रूप में अन्तर्देशीय आवागमन के साधन के रूप में इनका उपयोग हो रहा है, उसकी महत्ता अक्षुण्ण है।

इन मोटर-गाड़ियों के विकास की कहानी आवागमन के साधनों के विकास के इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अध्याय जोड़ती है।

धरती पर के परिवाहन के साधन (१)

मोटर

जहाँ रेलों की पहुँच नहीं, आधुनिक परिवाहन के रूप में मोटर की सवारी बहुत अच्छी होती है। भारतवर्ष के हजारों गाँवों का सम्बन्ध अभी रेल से नहीं हो पाया है। रेल के अभाव में इन स्थानों के लिए मोटर बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रही है। रेलगाड़ी को केवल पटरी पर ही चलाया जा सकता है पर मोटर को इच्छानुसार और जिस समय चाहे जहाँ तक रास्ता मिल जाय, ले जाया जा सकता है। जीप आदि को तो खेतों आदि में से भी ले जाया जा सकता है।

मोटर के आविष्कार का श्रेय गोल्सवर्दी गर्नी को है। इसने सन् १८२७ में १५ मील की गति से चलने वाली गाड़ी बनाई थी। सन् १८६० में लेंवायर नामक मनुष्य ने गैस से चलने वाला इंजन बनाया। सन् १८८७ में पेट्रोल द्वारा गाड़ी चलाने की विधि का पता लगा और वास्तविक मोटर जिसे मोटर कहा जा सके, वह सन् १८८६ में बनी। इसी समय के लगभग जर्मन वैज्ञानिक कर्लवेंज़ ने भी मोटर तैयार की। मोटर का इंजन रेल के इंजन से भिन्न होता है। उसमें गैस द्वारा अन्दर ही अग्नि उत्पन्न होती है। इसलिये इसे 'इंटर्नल कम्बस्टन' (Internal combustion) या 'आन्तरिक तापवाला इंजन' कहते हैं। पहले मोटर में रबर के टयूब नहीं लगते थे। पहिये लोहे के होते थे, इस कारण इसके चलने में बहुत आवाज होती थी। पर धीरे-धीरे सुधार होता रहा और मोटर के ढाँचे और पहिये के रूप-रंग में बहुत प्रगति हुई है। उन्नति की गति इतनी

तेज है कि प्रति वर्ष एक नया माडल निकलता है, जो कलात्मक तथा आकर्षक होता है। इसकी चाल भी १५ मील प्रति घंटे से बढ़ कर ३०० मील प्रति घंटे तक पहुँच चुकी है। मोटर को अधिक से अधिक ६० या ७० मील प्रति घंटे की गति से और औसतन २० से ४० मील फी घंटे की तेजी से चलाया जाता है। मोटर लारी १५ से २५ मील की गति से चलाई जाती है, क्योंकि इसका वजन अधिक होता है, तेज चलाने से पुर्जे जल्दी घिस जाते हैं।

मोटर में बाष्प इंजन की भाँति बॉयलर की आवश्यकता नहीं पड़ती। बॉयलर से शक्ति अधिक उत्पन्न तो अवश्य होती है, पर शक्ति का अपव्यय बहुत होता है। मोटर में ईंजन बहुत छोटा होता है और सारा ईंधन (पेट्रोल) काम में आ जाता है। भाप के इंजन को संचालित करने में काफी समय लगता है, पर मोटर तुरंत चालू हो जाती है और भाप के इंजन की अपेक्षा अधिक सरलता से काम देती है। मोटर के इंजन से सब लाभ होते हुए भी रेलों में इस इंजन का व्यवहार इसलिए नहीं होता है कि इसमें पेट्रोल के कारण खर्च अधिक पड़ता है। पेट्रोल कोयले की अपेक्षा बहुत महँगा होता है।

मोटर इंजन में कारब्यूरेटर (Carburattor), (२) सिलिंडर (Cylinder), (३) पिस्टन और अन्य अनेक छोटे-छोटे भाग होते हैं। पेट्रोल के इंजन की क्रिया को आटे की चक्की देख कर समझा जा सकता है। आटे की चक्की में एक बड़ा-सा सिलिंडर होता है, जिसमें एक पिस्टन लगा होता है। इस पिस्टन-राड का सम्बन्ध भारी पहिये (Fly wheel) से होता है। सिलिंडर में एक धड़ाकेवाली गैस, जो मिट्टी के तेल या पेट्रोल की भाप और हवा के मिश्रण से बनी होती है पहुँचाती है, पहिये को तीन चार-बार चलाते ही गैस फूट उठती है और पिस्टन-राड तेजी से स्वयं पहियों को घुमाने लगता है। गैस का धड़ाका पिस्टन को बाहर की ओर फेंक देता है और पहिये का वजन उसको बाहर की ओर फेंकता रहता है, इस प्रकार आटे की चक्की का इंजन चलता है। मोटर के इंजन में पहले पिस्टन सिलिंडर में नीचे की ओर कर दिया जाता है, इसके बाद पेट्रोल की भाप हवा के साथ कारब्यूरेटर से वाल्व के द्वारा सिलिंडर में पहुँचाई जाती है। इसी समय सिलिंडर के अन्दर विद्युत

की चिनगारी से पेट्रोलवाली भाप को जला दिया जाता है, इससे सिलिंडर के अन्दर शक्ति उत्पन्न होती है जो पिस्टन को बाहर की ओर ढकेलती है। कार-ब्यूरेटर द्वारा पेट्रोल की भाप से मिश्रित हवा बराबर पहुँचती रहती है और बार-बार शक्ति उत्पन्न होती है, जिससे पिस्टन अन्दर-बाहर घूमा करता है। इसका सम्बन्ध पहियों से होता है। पिस्टन की गति इतनी तेज होती है कि एक मिनट में लगभग १००० चक्कर लगाता है। बार-बार के विस्फोट से बहुत आवाज होती है, उसको दबाने के लिए साइलेन्सर (Silencer) लगाते हैं। बार-बार के विस्फोट के कारण सिलेंडर बहुत गर्म हो जाता है। इसको ठंडा रखने के लिए रेडियेटर में पानी डाला जाता है और गर्म पानी को ठंडा करते रहने के लिए भी इंजन में व्यवस्था रहती है। इंजन के आगे का पंखा पानी को ठंडा करता रहता है। इसके अतिरिक्त इंजन के आगे का भाग जालीदार बना होता है जिससे हवा अन्दर पहुँचती रहती है। दूसरा उपाय यह भी किया जाता है कि सिलिंडर के अधिक से अधिक भाग को ताप वितरण के लिए खुला रखते हैं।

ड्राइवर जिस स्थान पर बैठता है वहाँ इंजन के नियंत्रण के लिए बहुत से बटन होते हैं। पहियों का सम्बन्ध एक गोल हैंडिल से होता है जिसमें लिवर लगा होता है। गोल हैंडिल को घुमाने से मोटर के अगले दो पहिये ड्राइवर (चालक) की इच्छानुसार वांछित दिशा में मुड़ते हैं। चलती मोटर को रोकने के लिये दो प्रकार के ब्रेक होते हैं। एक ब्रेक ड्राइवर के पैर के नीचे होता है जिसको दबाने से गाड़ी रुक जाती है। इसके अतिरिक्त एक हाथ का ब्रेक होता है जिसको हाथ से पकड़ कर खींचते हैं। जब एकाएक गाड़ी रोकनी होती है, तब दोनों ब्रेकों का प्रयोग किया जाता है और गाड़ी एक झटके के साथ खट से रुक जाती है।

अच्छी गाड़ियों की पहचान उनके सिलिंडरों और हार्स-पावरों से होती है। इंगलैण्ड के मोटरों की मजबूती और शक्ति उनके हार्स-पावरों से पहचानी जाती है। एक हार्स-पावर की शक्ति ४०१ मन वजन उठाने या खींचने के बराबर होती है। अमेरिका से आनेवाली गाड़ियों की मजबूती की पहचान उनके सिलिंडरों से होती है। इंजनों की बनावट में बहुत उन्नति होती जा रही है। इसमें कम से कम पुर्जे से काम चलाने की चेष्टा हो रही है। कितने ही इंजनों

को चलाने के लिए बाहर से हेंडिल लगाना पड़ता है, पर बहुत से इंजनों में ड्राइवर अपने स्थान पर बैठे-बैठे ही 'सेल्फ-स्टार्टर' की सहायता से इंजन चला लेता है। गाड़ी को चलाने के बाद 'गेयर' बदलना पड़ता है। 'गेयर' से गति ठीक होती है। नये ढंग की गाड़ियों में गेयर अपने आप बदलता रहता है। इसको 'फ्लुइड ड्राइव' वाला गेयर कहते हैं। जीप कार में डिफ्रेंशियल गेयर (Differential Gear) होता है जो आगे और पीछे दोनों में लगा होता है। जब एक पहिया कीचड़ या गढ़े में फँस जाता है, तब दूसरा गेयर पहिये को धक्का देकर आगे बढ़ा देता है। उबड़-खाबड़ जगह में भी जीप बड़ी अच्छी तरह से चलती है। इसी से इसको सैनिक कार (जीप) कहते हैं।

बाडी की बनावट की दृष्टि से मोटरें कई प्रकार की होती हैं। जिस मोटर की छत समेटी नहीं जा सकती है, उसे 'सैलून'-कार कहते हैं। अधिकतर कारें सैलून-कार ही होती हैं। जिस मोटर की छत इच्छानुसार समेटी और लगाई जा सकती है उसे 'टूटर' कार कहते हैं। जीप 'टूटर' कार है क्योंकि इसकी छत (Hood) समेटी और लगायी जा सकती है। एक गाड़ी होती है, जिसे 'स्टेशन-वैगन' कहते हैं। यह बड़ी होती है। स्टेशन-वैगन के ढंग की गाड़ी में जब पिछला भाग खुला रहता है तब उसे 'पिक-अप' कहते हैं, और पीछे की ओर बेंच की-सी सीटें लगी होती हैं। बड़ी मोटर को जिसमें १५, २० या ३० व्यक्ति बैठ सकते हैं 'बस' या 'लारी' कहते हैं। लारी दो तल्ले की भी होती है। इसमें अधिक यात्री बैठ सकते हैं। कलकत्ता, बंबई, हैदराबाद, आदि में दो तल्ले की मोटरें प्रयोग में आ रही हैं। रोल्स रायल्स, थन्डरबोल्ट, फोर्ड, शिवर-लेट, ब्यक, ब्लूबर्ड, मारगन, मरकरी, शिवालियर और आस्टिन आदि प्रसिद्ध मोटरों के नाम हैं।

बोझा ढोने के लिए, अलग ढंग की मोटरों का निर्माण होता है जिसका पिछला भाग खुला रहता है और जिसका आकार भी लम्बा होता है। इस खुले भाग में सामान रख दिया जाता है। बरसात से रक्षा के लिए त्रिपाल आदि की व्यवस्था भी कर ली जाती है। बैंकों आदि के लिए बाडी चारो तरफ से घिरी बनायी

जाती है, ताकि मूल्यवान वस्तुएँ भी सुरक्षित रूप में स्थान्तरित की जा सकें। बंदियों के लिए लोहे की जालीमढ़ी 'बाडी' का निर्माण किया जाता है।

मोटर ड्राइवरों को मोटर चलाने के लिए लाइसेन्स लेना पड़ता है। लाइसेन्स इस बात का प्रमाण होता है कि मोटर चलानेवाला मोटर चलाना तथा सड़क और ट्रैफिक के सभी नियमों को जानता है। रास्ते की बनावट के बारे में सड़कों के किनारे चिह्न लगे होते हैं, जिससे पता चलता रहता है कि आगे कोना, मोड़ या पुल आदि हैं। सड़कों पर कहीं-कहीं मोटर की गति के विषय में आदेश होते हैं, जैसे 'गाड़ी धीमी चलाइये, 'दस मील की गति से', शोर न कीजिए, अस्पताल है, आदि।

मोटरों का विकास

मोटर के विकास की कहानी का प्रथम अध्याय वहाँ से आरंभ होता है, जहाँ से वाष्प-चालित इंजनों को आधार बनाकर मोटर का संचालन सड़कों पर प्रारंभ किया गया था। पर ये वाष्प चालित प्रारंभिक अवस्था की मोटरें विशालकाय साधन-सम्पन्न रेलों के सामने डट न सकीं। प्रतिस्पर्द्धा की होड़ में मोटर यातायात टिक न सका। साथ ही कर का इतना अधिक बोझ इसके मत्थे मढ़ा गया कि ये असफल होकर रहीं। इंगलैण्ड में जहाँ इनका सर्वप्रथम प्रयोग आरंभ हुआ वहीं इनके विकास का प्रथम परिच्छेद आशा से रीता रहा।

दूसरा अध्याय इनके विकास का सन् १८८४ से आरंभ होता है, जब डेमलर ने कम्बस्टन इंजन का आविष्कार किया। १८९४ में पहली बार इंगलैण्ड की सड़कों पर लोगों ने पेट्रोल द्वारा संचालित मोटर-गाड़ियों को दौड़ते हुए देखा। पहली बार जनता का ध्यान इस ओर गया और प्रथम बार के मोटर के प्रयोग के प्रति जनता में जो अनास्था की भावना व्याप्त हो गयी थी—उसमें परिवर्तन दिखायी पड़ा। जनता इस ओर उन्मुख सी दीखने लगी। रेलों से प्रतिस्पर्द्धा के सम्बन्ध में अब की बार मोटर-यातायात ने दृढ़ता दिखायी। इसका प्रयोग अधिकतर सवारी गाड़ी के रूप में होता रहा।

लगभग बीस वर्ष पश्चात् प्रथम विश्वयुद्ध प्रारंभ होने के अवसर पर इसका उपयोग व्यापक रूप से आरंभ हुआ। सन् १९१४ से सन् १९१८ तक अत्यन्त द्रुत-

गति से मोटर का आन्तरिक उपयोग किया गया । सड़कों के भाग्य फिर लौटे । इसका श्रेय द्वितीय-विश्व युद्ध की आवश्यकता तथा पेट्रोल द्वारा मोटर के चालित इंजनों को है । अबकी बार व्यापक रूप से सामानों के ले जाने और ले आने के लिये भी मोटर का उपयोग सर्वत्र व्यापक मात्रा में किया गया । इस सीमा तक विजय मोटर परिवाहन की कही जा सकती है कि देश के यातायात में रेलों का एकाधिकार इस बार मिट गया । मोटरों की उपयोगिता ने रेलों की उपयोगिता के समक्ष जनता एवं व्यापारियों दोनों के मध्य में अपनी मान्यता स्थापित करवा ली ।

मोटर का उपयोग व्यापारिक सामानों एवं व्यक्तियों के स्थान्तरण के लिए व्यापक परिमाण में किया जाने लगा । जिन स्थानों में रेलें नहीं थीं, वे उन स्थानों की अपेक्षा अधिक अनुप्राणित हुए, जहाँ पर रेलें थीं । उदाहरण स्वरूप इंगलैण्ड का साउथ वेल्स, जो खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था रेलों के अभाव में उदासीन पड़ा था । वहाँ मोटरों ने उसको अत्यधिक उपयोगी बना इंगलैण्ड के सम्मान को आगे बढ़ाया ।

मोटर के विकास की कहानी का चौथा अध्याय उसके बाद आरंभ होता है । अन्तर्प्रान्तीय व्यापार में इनका उपयोग और भी व्यापक ढंग से आरंभ हुआ । क्योंकि आविष्कार मोटरों के इंजन की संचालन कार्य-प्रणाली को सरल, सुगम तथा द्रुतगति बनाने का कार्य करते गये । आज मोटर यातायात के साधन के रूप में विश्व भर में व्यापक रूप से परिवाहन के आवश्यक साधन का रूप ग्रहण कर चुकी है । युद्ध के समय भी इसके व्यापक उपयोग ने इसकी प्रगति को और आगे बढ़ाया है । इसकी सफलता इसी बात से समझी जा सकती है कि १९४९ में भारत जैसे अर्द्धविकसित औद्योगिक देश में लोगों ने सवारी तथा माल ढोने के लिए २६९६६९ मोटर-गाड़ियों का उपयोग किया ।

प्रकार

मोटर यातायात का संगठन दो भागों में विभक्त है, क्योंकि मोटर का उपयोग या तो सामान ढोने के लिए या सवारी के काम के लिये किया जाता है । व्यवहार की दृष्टि से सवारी-मोटर और माल-मोटर दो विभाग मोटर यातायात के लिये किये जा सकते हैं ।
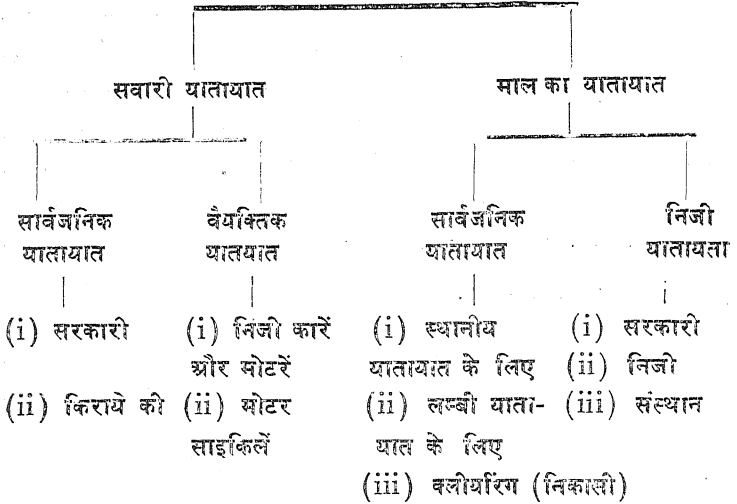
सवारी की मोटरें भी उपयोग के लिये दो प्रकार की होती हैं। एक तो वे जिनका उपयोग निजी रूप से किया जाता है। जिसके व्यवहार करने का द्वार सर्वसाधारण के लिए खुला नहीं रहता। दूसरे प्रकार की वे मोटर गाड़ियाँ हैं, जिनका व्यवहार सर्वसाधारण-सवारी के लिए नियमानुसार भाड़ा देकर किया जा सकता है। इसे सार्वजनिक मोटर यातायात की संज्ञा और पहले को वैयक्तिक यातायात की संज्ञा दी जा सकती है।

वैयक्तिक कार्यों के लिए अधिकांशतः मोटर साइकिलों या कारों का उपयोग किया जाता है। विगत वर्षों में विश्व में मोटर-कारों के उत्पादन में हेलाहेल मच जाने के कारण वैयक्तिक रूप से मोटर साइकिलों तथा निजी कारों का उपयोग संसार के सभी देशों में बढ़ रहा है। द्वितीय यहा युद्ध के बाद तो इसकी गति और तीव्र हुई है। ये निजी कारों मनोरंजन और व्यापारिक दोनों प्रकार के सवारी यातायात के लिये उपयोग में लायी जाती है।

इसके द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर व्यक्तिगत रूप से लोग आते-जाते हैं। इसके द्वारा प्रस्तुत सुविधा ने व्यापारियों, उच्च-कर्मचारियों, यात्रियों आदि को काफी प्रभावित किया है; क्योंकि इसमें व्यक्ति की स्वतंत्रता, मर्यादा तथा यात्रा की सरलता का सुन्दर ढंग से परिबोध होता है।

सार्वजनिक मोटर गाड़ियाँ सवारियों को किराये या पुरस्कार के आधार पर एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले आती, ले जाती है। सार्वजनिक मोटरगाड़ी दो प्रकार की होती हैं, जिसमें पहले को 'स्टेज कैरेज' और दूसरे को 'एक्सप्रेस कैरेज' कहते हैं। पहले भाँति की व्यवस्था स्थानीय मुसाफिरों की सेवा के लिये होती है। ये मोटर गाड़ियाँ थोड़ी-थोड़ी दूरी पर सवारियों को चढ़ाती और उतारती हैं, इनका उपयोग प्रायः नगरों या नगर के पड़ोस के क्षेत्रों में होता है। कभी-कभी दो छोटे-छोटे उपनगरों के बीच भी ये चलती हैं और बीच में पड़ने वाले गाँवों में भी रुकती हैं। दूसरे प्रकार की गाड़ियाँ लम्बी-यात्रा के लिये होती हैं, और सामान्यतः बहुत दूर-दूर पर निश्चित स्थानों पर रुक कर सवारियों को उतारती और बैठाती हैं। यद्यपि इनकी गति रेल की अपेक्षा कम होती है, तो भी किराया इनका सस्ता होता है तथा सुन्दर ग्रामीण दृश्यों को देखने का अच्छा अवसर मिलता है।

सामान ढोने वाली मोटर गाड़ियों के नाना प्रकार होते हैं जिनमें से अनेक तो व्यापारिक संस्थाओं की होती हैं और उन्हीं के माल ढोने के निजी काम में आती हैं। उनमें से कुछ तो अर्द्ध सरकारी संस्थाओं की भी होती हैं जो उनका कार्य करती हैं, यथा म्युनिस्पलबोर्ड, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड तथा कारपोरेशन की ट्रकें कूड़ा-करकट ढोने, पानी छिड़कने आदि कार्यों में आती हैं। सरकारी ट्रकों पर सरकार सें सम्बन्धित माल ढोया जाता है। बहुत सी निजी माल ढोने-वाली गाड़ियाँ केवल अपने संस्थान के काम के लिये रहती हैं पर कभी-कभी काम की कमी रहने के कारण ठीके के आधार पर दूसरे लोगों का माल भी ढो देती हैं, यद्यपि आधिकारिक रूप से उन्हें किराये पर चलने का अधिकार नहीं है। इनकी यात्रा की दूरी लम्बी और छोटी दोनों हो सकती है। यातायात के लिये नियुक्त इंगलैण्ड के रायल कमीशन के विचारानुसार तीस से पचास मील तक की दूरी

छोटी यात्रा की परिधि में आती है और इससे अधिक की दूरी बड़ी यात्रा के अन्तर्गत मानी जाती है । प्रायः ये ट्रकें ऐसे ही माल ढोने का ठीका लेती हैं, जिसमें ये दिन भर में पुनः वापस लौट आयें । यदि यात्रा में कई दिन लगने की संभावना होती है तो इनका किराया रुकने तथा ड्राइवर आदि के खर्च आदि के कारण बढ़ा दिया जाता है । इन्हें 'होलेज' ठीकेदार कहा जाता है ।

जो गाड़ियाँ किराये पर चलती हैं उन्हें सार्वजनिक मोटरगाड़ी की संज्ञा दी जाती है । इसके लिये विभिन्न देशों में अपने देशों के नियमानुसार मोटर
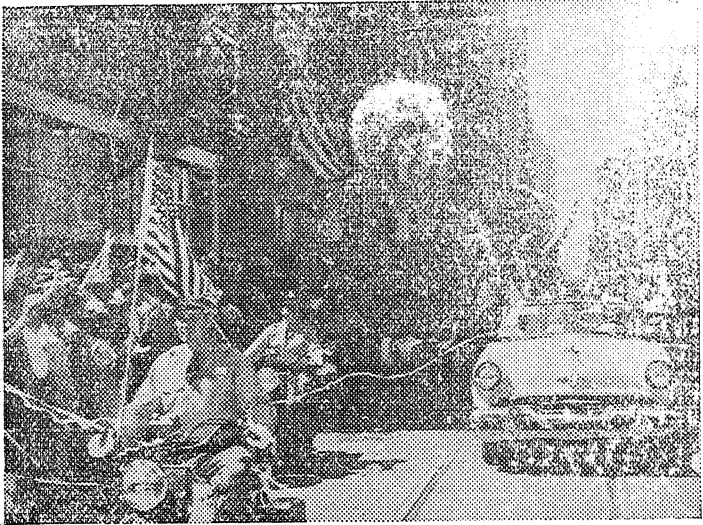
मोटर और मोटर साइकिलें प्रचारात्मक कार्य में

के मालिकों को लाइसेन्स लेना पड़ता है । साथ ही इस बात का प्रतिज्ञा पत्र भी भरना पड़ता है कि वह अपनी सवारी गाड़ी सार्वजनिक हित के अनुकूल सुन्दर ढंग से रखेंगे और उन सभी नियमों का पालन सुचारु रूप से करेंगे, जो नियमतः उनके लिये निर्धारित है । मोटर के ड्राइवर और कंडक्टर के लिये लाइसेन्स लेना आवश्यक है । यह लाइसेन्स तबतक नहीं दिया जाता जबतक ड्राइवर

की कार्य-पटुता का परीक्षण नहीं कर लिया जाता। साथ ही उनमें आयु २१ वर्ष और १८ वर्ष की ड्राइवर और कंडक्टर होने के लिए होनी चाहिये। यह लाइसेन्स एक निश्चित अवधि के बाद, जो प्रायः वर्ष भर का होता है पुनर्चालित किया जाता है। इसके पुनर्चालन का प्रमाण-पत्र तबतक नहीं दिया जाता जबतक की भलीभाँति यह जाँच न कर लिया जाय कि मोटरगाड़ी अच्छी स्थिति में है और तत्संबंधी कार्य के लिये बिलकुल दुरुस्त है।

कुछ लोग माल ढोने की गाड़ियाँ खरीद कर केवल किराये के व्यवसाय के लिये माल ढोते हैं, और कुछ लोग निजी व्यवसाय के लिये उसका उपयोग करते हैं, पर प्रत्येक परिस्थिति में नियम के अनुसार मोटर को दुरुस्त रखना, निर्धारित वेग के अनुसार उसको हाँकना, माल ढोने की निर्धारित वजन की सीमा से अधिक माल न ढोना, निर्धारित समय तक ही मोटर से काम लेना, आवश्यक होता है। साथ ही पथ पर चलने के लिये जो नियम हैं उनका पालन करना आवश्यक है।

औद्योगिक विकास की दृष्टि से जो देश या स्थान उन्नत हैं वहाँ माल ढोने के लिये एक और व्यवस्था होती है, जिसे निकासी यातायात "किलयरिंग हाउस" कहते हैं, ये लोग एक प्रकार के मध्यस्थ होते हैं जो ऐसे लोगों के बीच जो अपना माल भेजवाना चाहते हैं और ऐसे लोग जो अपनी मोटर गाड़ियों द्वारा माल ढोने का व्यवसाय करते हैं के मध्यस्तथ का कार्य करते हैं। यदि ये मध्यस्थ ईमानदारी पूर्वक अपना कार्य करें तो इनसे अनेक लाभ होते हैं। यथा, मोटर वाला अपनी मजदूरी सीधे इनसे पा जाता है तथा व्यापारी के यहाँ दौड़ने से बच जाता है और उसे हिसाब-किताब रखने में भी सुविधा होती है, क्योंकि निर्धारित समय पर उसे रकम मिल जाती है और ग्राहक की खोज में भटकना नहीं पड़ता। कुछ क्लियरिंग हाऊसों के पास 'गराज' होता है और वे इन माल ढोनेवाले मोटरों को पेट्रोल भी उधार देते हैं, जिससे मोटरवाले लाभान्वित होते हैं। माल ढुलानेवालों के लिये भी ये लाभप्रद होते हैं; क्योंकि वे मोटर ढूंढ़ने की परेशानी से बच जाते हैं और उनके सामान की सुरक्षा का दायित्व एक अच्छे क्लियरिंग हाऊस के मत्थे रहता है जिससे वे परेशानियों से मुक्त रहते हैं।

मोटर का उपयोग

भारत में इधर द्रुतगति से मोटर का उपयोग बढ़ रहा है। ज्यों-ज्यों समय बीतता जा रहा है,त्यों-त्यों लोग मोटरकी महत्ता तथा आवश्यकताका अनुभव करते जा रहे हैं। विदेशों में विशेष कर अमेरिका आदि समुन्नत देशों में प्रायः प्रत्येक मध्यवर्गीय परिवार में मोटरों की औसतन व्यवस्था है। पर भारत के लिए यह बात अभी भविष्य का स्वप्न है क्योंकि औद्योगिक दृष्टि से भारत अभी बहुत पिछड़े हुए देशों में है। यहाँ पर अभी तक एक भी मोटर का ऐसा कारखाना नहीं खोला जा सका जिसमें मोटर का सम्पूर्ण निर्माण किया जा सके। बिरला ब्रदर्स की ओर से हिन्दुस्तान मोटर्स का कार्य अभी कुछ वर्षों से ही आरंभ हुआ है, जिसमें विदेशों से आयी कम्पनियों के विभिन्न-विभागों को संलग्न कर मोटर गाड़ी का निर्माण किया जाता है। यहां पर बनी मोटरें हिन्दुस्तान और स्टुडीबेकर स्टूडी बेकर काफी जन-प्रिय हुई हैं। मोटर के विकास में एक कठिनाई यह भी पड़ रही है कि अच्छी सड़कों का अभाव देश में है। इस उद्योग के संस्थापन के लिए बहुत बड़ी पूंजी की आवश्यकता पड़ती है। देश में इतनी पूंजी नहीं कि इतना बड़ा उद्योग चलाया जा सके। पूंजी का अभाव तो इतना अधिक बढ़ गया है कि बहुत से ऐसे कार्य जो मोटर के निर्माण से भी अधिक देश के लिए आवश्यक हैं पूंजी के अभाव में पनपाये नहीं जा पा रहे हैं।

सरकार इस समय भारत से धन बाहर नहीं जाने देना चाहती। इसलिए वह इस बात का प्रयत्न कर रही है कि विदेशों से कम से कम सामान अपने देश में आये। इसी के वशीभूत हो उसने बाहर से आनेवाली अन्य वस्तुओं के साथ मोटर पर बहुत ज्यादा कर लगा दिया है। इस कारण बहुत से लोग खरीदना चाह कर भी मँहगी पड़ने के कारण मोटर नहीं खरीद पाते।

नीचे एक चार्ट दिया जा रहा है जिससे यह प्रकट होता है कि विश्व के अन्य औद्योगिक राष्ट्रों के मुकाबले हमारी कितनी दयनीय स्थिति है सड़कों के सम्बन्ध में।
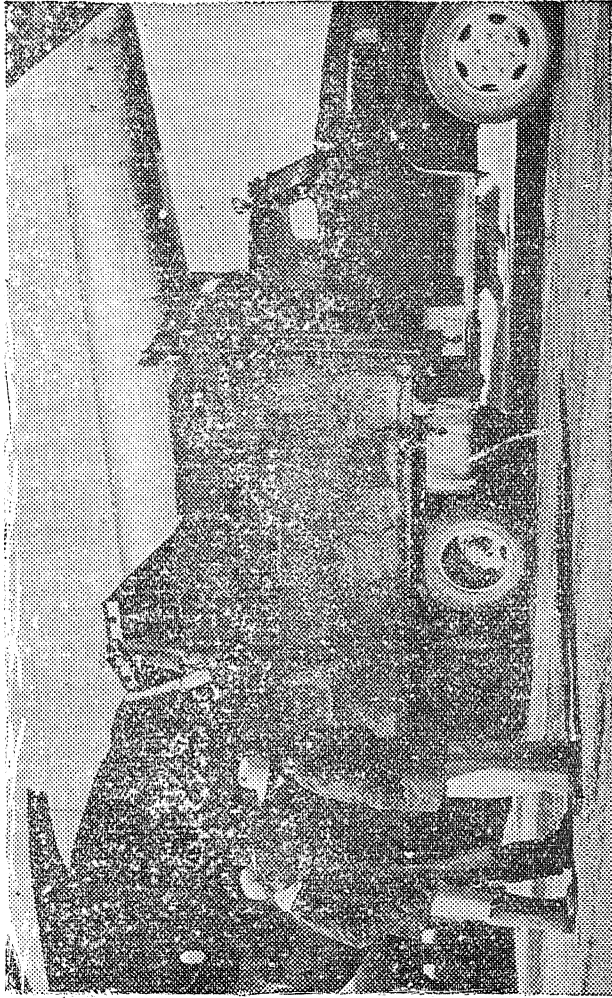
माल ढोनेवाली आधुनिकतम मोटर

प्रमुख देशों की सड़कों की लम्बाई

देश	मोटर-यातायात के उपयुक्त सड़कें	मोटर यातायात के लिए अनुपयुक्त सड़कें	सड़कों की लम्बाई
भारत	१,८१,४०६	५७,५७५	२३६,०८१
संयुक्तराष्ट्र अमेरिका (१६४०)	१०,००,०००	२०६,०००	३००६,०००
इंगलैण्ड (१६३६)	१६०,१२०	१६,१७०	१७६,२६०
फ्रांस (१६३६)			४०५,०२८

इन सड़कों के उत्थान के लिए जो योजना बनायी गयी है उस योजना का विकास कुछ आवश्यक परिस्थितियों के वशीभूत हो संकट-ग्रस्त हो गया है। उन कारणों का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। नीचे दिये गये चार्ट से यह बात प्रकट होती है कि भारतवर्ष की क्या स्थिति है। सड़कों की लम्बाई, मोटर के उपयुक्त सड़कों की लम्बाई, १० लाख व्यक्तियों के पीछे सड़कों की लम्बाई, मोटर के उपयुक्त तथोक्त प्रकार के सड़कों की मोटर के उपयुक्त लम्बाई एक हजार वर्ग मील के पीछे सड़कों की लम्बाई, तथोक्त मोटर के उपयुक्त सड़कों की लम्बाई आदि आंकड़े दिये गये हैं। वह इस तथ्य को प्रकट करते हैं कि भारत-वर्ष में जो सड़कें सौभाग्य से हैं; उनका एक अंश मात्र ही मोटर चलाने के उपयुक्त है। यह दुर्भाग्य इस अर्थ में है कि परिवाहन के साधनों के अभाव में देश की प्रगति को धक्का लग रहा है।

भावी योजना का जिसकी चर्चा नागपुर-योजना के अन्तर्गत हुई है इस चार्ट में आंकड़ा दे दिया गया है।

सड़कों के विकास की योजना मीलों में

	वर्तमान	नागपुर-योजना
१—सड़कों की लंबाई—(१६४३)	२३६,०८१	३८५,२२६
२—मोटर के उपयुक्त सड़कें (१६४३,	१८१,४०६	२८६,८५५
३—प्रति दस लाख व्यक्ति सड़कों की लंबाई	७४६.८६	१,२०८.१८
४— ,, ,,मोटर के उपयुक्त	५६८.६६	६०६.१४

आधुतिकतम नई मोटर जिसमें बैठकर व्यक्ति सभी आधुनिक सुविधायें प्राप्त कर सकता है। उपहार के रूप में दी जा रही हैं

५—एक हजार वर्ग मील के भीतर सड़कों की लम्बाई	१६६.४५	३१६.५३
६— ,, ,, मोटर के उपयुक्त	१४६.०६	२३८.१७

मार्च १६४६ में भारतवर्ष में निजी मोटर गाड़ियों की संख्या जो जनता के कार्य में आती रहीं। उनकी संख्या प्राप्त करों के अनुसार क्रमशः २६६, ६६६ मोटरें, २२८१० मोटर साइकिलें, १३३, ३६६ मोटरकारें, १०,६०७ किराये की कारें, २७२७५ किराये की सवारी मोटरें ७२,६२६ माल ढोनेवाली मोटरें तथा २,६५२ विभिन्न प्रकार की मोटरें थीं। यह आंकड़ा सन् १६४५ का है।

नीचे के चार्ट से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतवर्ष में कितनी मोटरें प्रतिवर्ष बाहर से उपयोग के लिए आती हैं, इनकी संख्या प्रति वर्ष निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। यह भी इससे स्पष्ट हो जायेगा।

भारत में मोटरगाड़ियों की संख्या

(देशी राज्यों के अतिरिक्त)

१६४२—४३	१२१.२८२
१६४३—४४	१३१,०६६
१६४४—४५	१४२,१७२
१६४५—४६	१४४,६४६
१६४६—४७	१६८,३८६

आयात मोटर गाड़ियोंका

१६४३	...	... ७,२६२
१६४४	...	... ११३
१६४५	...	... ७,८११
१६४६	...	... ८,३७६
१६४७	...	...२२,४०७
१६४८	...	...४०,३७६
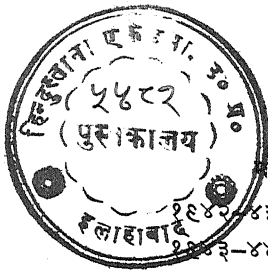
मोटर साइकिलों का आयात

१९४२–४३	१६,१३४
१९४३–४४	२८,३५५
१९४४–४५	३७,३९१
१९४५–४६	७६,१४१
१९४६–४७	२१२,५५४
१९४७–४८	२६१,३५८

सावधानी बरतने पर भी कभी-कभी ऐसा होता है कि मोटर दुर्घटनाएँ यातायात में हो जाया करती हैं। जिससे हानि भी जन और सम्पत्ति की उठानी पड़ती है पर लाभ इससे इतना अधिक होता है कि यह हानि उसके मुकाबले में कुछ नहीं है। जो दुर्घटनाएँ हुई हैं और जहां तक उनका आंकड़े प्राप्त हो सके हैं यहाँ उन्हें प्रस्तुत किया जा रहा है।

भारत में मोटर-दुर्घटनायें

वर्ष	संघातिक	दुर्घटनायें
१९४२–४३	७१५	३,८६९
१९४३–४४	९५३	६,५२७
१९४४–४५	१,१३५	८,००९
१९४५–४६	१,६४४	१०,६७९

मोटर यातायात से लाभ

रेलों को आवागमन के साधन में वहीं प्रयोग में लाया जा सकता है जहाँ तक रेलों की पटरियाँ बिछायी जा सकती हैं। अभी संसार के सभी भू-प्रदेश ऐसे नहीं जहाँ सर्वत्र रेलें चप्पे चप्पे पर प्रसारित हो चुकी हों। नदियाँ या नहरें जिनका जल के आवागमन के साधन के रूप में प्रयोग होता है इतनी सर्वव्यापिनी नहीं जो धरती के हर एक कोने को अपने आँचल में समेट सकें। यातायात के रेल और जल के साधन कितने भी विकसित क्यों न हो जाय यह कल्पना करना भ्रम की सृष्टि करना होगा कि द्वार द्वार को संयोग के रूप में मिलाने का कार्य इन मोटरों

द्वारा सम्भव है । ऐसी परिस्थिति में ग्राम के आन्तरिक भागों को नगरों एवं औद्योगिक केन्द्रों यहाँ तक कि रेलवे के स्टेशनों तक से सम्बद्ध करने का साधन ये मोटरें ही बन सकती हैं ।

नये आविष्कारों, नये विचारों, नये मनोभावों की संदेशवाहिका का कार्य ये मोटरें आज विश्व के नगरों एवं सुदूर ग्रामों के बीच कर रही हैं । उदाहरण के रूप में जब पहले-पहल अंग्रेज आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, अमेरिका आदि में गये, वहाँ पर अपनी सत्ता स्थापित की । आवागमन का विधान शासन को स्थायी बनाने की दृष्टि से किया । उन्होंने रेलों की पटरियाँ बिछवायीं पर जब तक मोटरें उन विशाल भू-प्रदेशों के अन्तरवर्ती क्षेत्रों को आत्मसात करने के लिए उपयोग में नहीं लायी गयीं, तब तक अंग्रेज समुद्र के किनारे उन महादेशों के तटों पर ही रह पाये । इन मोटरों के आवागमन के पश्चात् जब उन्होंने भीतरी भू-प्रदेशों से सम्पर्क स्थापित कर अपनी सत्ता जमायी तब कहीं उन सुदूर प्रदेशों की अतुल धन-राशि से परिचय बना सके और उनका उपयोग कर सके । इन्हीं मोटरों के आवागमन को परिवाहन के साधन के रूप में स्वीकार कर कोटि-कोटि प्राणियों के रहनेवाले ग्रामों की उन्नति की सुन्दर रचना की जा सकती है तथा उनका भविष्य सुधारा जा सकता है । भारत के स्वतंत्र होने पर जब गत वर्ष पहले जनतान्त्रिक चुनाव के अवसर पर यह भलीभाँति विभिन्न दलों ने पहले से ही अनुभव कर लिया था कि जिसके पास आवागमन के लिये जितनी ही अधिक मोटरें ग्रामीण क्षेत्रों से सम्पर्क स्थापन के लिए होंगी उसकी सफलता उतनी ही अधिक होगी । प्रचार सफलता प्राप्त करने के लिये अत्यन्त आवश्यक था और जीप मोटरों का उपयोग जिस द्रुतगति से हुआ उसे देखते हुए कहा जा सकता है कि ये ग्रामीणों में नयी योजनाओं को सफल बनाने में चेतनासम्पन्न कार्य भी कर सकती हैं ।

इनके द्वारा ग्राम के कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन मिलता है । क्योंकि उन क्षेत्रों से सामान आकर नगरों में अपना अच्छा बजार बना लेता है । दोनों क्षेत्रों का इससे कल्याण होता है । कुछ लोगों को रोजी मिलती है । कुछ लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा उठता है ।

आवागमन के सुदूर क्षेत्रों में सम्पर्क स्थापन का यह परिणाम भी होता है कि मानव का क्रम अधिक गति से प्रवहवान हो पाता है । इसका परिणाम यह होता है श्रमकर्त्ता लाभ में रहता है; एक स्थान के उद्योग की प्रगति मन्द पड़ने पर दूसरे स्थान पर जाकर अपने श्रम की सार्थकता का लाभ उठाने में उसे सफलता मिलती है ।

सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में जो कच्चा माल यातायात के अभाव में पानी के मोल बिकता है वह मोटर द्वारा औद्योगिक क्षेत्रों से जोड़ दिये जाने के पश्चात् अधिक सम्पन्न हो जाता है क्योंकि वहाँ पर उत्पन्न होनेवाले कच्चे माल का मूल्य उन क्षेत्रों में बढ़ता है जो औद्योगिक हैं । इस प्रकार विपन्न क्षेत्र को सम्पन्न बनाने में भी मोटर-यातायात सहायक होता है ।

अब एयरकण्डिशण्ड मोटरों तथा रेफ्रीजरेटरवाली गाड़ियों का निर्माण होने लगा है, जिससे कच्चे सामान भी सुगमतापूर्वक उन क्षेत्रों में भेजे जा सकते हैं जहां उन कच्चे पदार्थों की माँग है । इस प्रकार भी आय के स्त्रोत के लिए ये मोटर गाड़ियाँ द्वार खोल चुकी हैं ।

इनके द्वारा एक बहुत बड़ा लाभ यह हुआ है कि आवागमन के सुदूर क्षेत्रों में माल ले जाने और ले आने के जो पुराने साधन हैं उनकी अपेक्षा मोटर द्वारा परिवाहन सस्ता सरल तथा द्रुतगामी पड़ता है । अतएव इस साधन के द्वारा न केवल समय की बचत होती है अपितु उस क्षेत्र से सम्बन्धित लोग लाभान्वित भी होते हैं ।

आज के पूंजीवादी युग में प्रत्येक बड़ा उत्पादक पूरे बाजार पर अपना कब्जा जमाना चाहता है । ऐसी परिस्थिति में कभी-कभी जी तोड़ प्रतिस्पर्द्धा विभिन्न उत्पादकों में बाजार के लिए होती है । ऐसी प्रतिस्पर्द्धा की स्थिति में स्पर्द्धी इस बात का प्रयत्न करते हैं कि उनके द्वारा उत्पादित वस्तु का बाजार निरन्तर व्यापक एवं प्रभावकारी होता जाय । नये बाजारों की खोज भी आवश्यक हो उठती है और इस बात में भी उनमें स्पर्द्धा रहती है कि किसी भी नये क्षेत्र को सर्व-प्रथम हम ही प्रभावित करें अन्यथा जो पहले जम जायेगा; बाजार उसी के हाथ रहेगा । ऐसी परिस्थिति में परिवाहन के साधन प्रचार आदि में जो सर्वाधिक

वैज्ञानिक रूप से उपयोग में लाये जाते हैं उन्हें ही सफलता मिलती है। सर्वत्र यह देखा जाता है मोटरें इसके लिए सर्वाधिक उपयोगी प्रमाणित हुई हैं। भारत में भी बाजार-बाजार बाटा की मोटरें घूमते हुए देखी जा सकती हैं।

रेलवे आदि द्वारा सामान भेजने पर सामान खोने, नष्ट होने आदि का खतरा अधिक रहता है क्योंकि कोई ऐसा व्यक्ति सामान के साथ नहीं रहता जिस पर दायित्व उस वस्तु की रक्षा का हो। पर बात मोटरों के सम्बन्ध में नहीं कही जा सकती। मोटरवाला इस बात का दायित्व समझता है कि सामान सकुशल निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच जाय। 'रिस्क-नोट' जो रेलवे का सामान भेजने के लिये इस कारण भरना पड़ता है कि यदि सामान विनष्ट हो जाय तो रेलवे उसके लिये दायी नहीं होगी। उसका दायित्व भेजनेवाला स्वयं ले लेता है, पर मोटर में इन झंझटों से भी निवृत्ति मिलती है जिससे समय की बचत होती है। जोखिम भी कम होता है। इस प्रकार ये मोटरें जोखिम और समय तथा अपव्यय को कम करने में सहायक प्रमाणित होती हैं।

ये सफलताएँ केवल सामान के परिवाहन के रूप में मोटरों द्वारा प्राप्त नहीं होतीं बल्कि सवारियों के उपयोग में भी वे वैधानिक, सामाजिक, राजनीतिक चेतना का द्वार उन ग्रामों के लिए भी उन्मुक्त रूप से खोलती हैं जो युगों से चेतना-विहीन हो सुसुप्ति की साँस ले रहे थे।

उन ग्रामीणों के मन स्वप्न बसाने लगते हैं कि उनका युग भी आधुनिक संसार के विकसित ज्ञान को अपने भीतर समेट कर महान बनेगा। मोटर द्वारा समाचार पत्र मिलने पर वह यह सोचने लगता है और अनुभव करने लगता है कि उसकी ईकाई अब समाधिस्थ न रही; संसार उसके साथ है, संसार की गतिविधि उसके साथ है, और मानसिक संतुष्टि को गले लगा वह द्विगुणित प्राण बन-बन अपने सुन्दर भविष्य की रचना में संलग्न हो जाता है।

धरती के परिवाहन के साधन (२)

रेल

आधुनिक युग में मशीनों द्वारा संचालित परिवाहनों में रेल ने सबका नेतृत्व किया है। इसके द्वारा आवागमन के साधन में अभूतपूर्व क्रान्ति उपस्थित हुई। संसार ने यह एक ऐसा साधन पाया जिसके कारण औद्योगिक प्रगति विकासोन्मुखी हो मानव के श्री सम्वर्द्धन में सहायक प्रमाणित हुई।

प्रथम युद्ध के पूर्वतक आवागमन के साधन के रूप में विश्व में रेलों का एकाधिकार परिव्याप्त था। युद्ध में इस एकछत्र राज्य पर आघात मोटरों के प्रयोग ने उपस्थित कर दिया। यद्यपि अब संसार के सभी देशों में रेलों का एकमात्र अधिकार नहीं है तो भी प्रत्येक देश के लिए आवागमन के साधन के रूप में रेल की महती महत्ता आज भी अक्षुण्य बनी हुई है।

प्रथम युद्ध में जो प्रतिस्पर्द्धा सड़क से विशेषकर, मोटर-यातायात से रेलों को करनी पड़ी, वह इसकी उस महत्ता के लिये जो पहले थी, एक बाधा के रूप में आयी। उस युद्ध के पश्चात् भी अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका आदि की उन्नति में इन रेलों ने सर्जनात्मक कार्य किया है तथा उन क्षेत्रों में नयी सभ्यता, संस्कृति और नव-जीवन का संचार करने में सहायक सिद्ध हुई हैं। कुछ देशों का उद्योग तो इन्हीं रेलों पर ही निर्भर है, यथा कनाडा का कृषि-उद्योग, विशेष कर गेहूँ; भारत में अकाल दूर के सम्बन्ध में की जानेवाली सेवाएँ। देशी व्यापार के क्षेत्र में की गयीं सेवाएँ रेलों के लिए आज भी गरिमा और गौरव की बात हैं। सुदूर प्रदेशों का माल वे बन्दरगाह तक बड़े परिमाण में पहुँचा देती हैं और बन्दर-

गाह से बाहर से आयी हुई वस्तुएँ देश के भीतरी भाग तक पहुँचाने में सहायक होती हैं। इसके द्वारा देश के उद्योग-धन्धों का अन्ताराष्ट्रिय बाजार बनता है। परिवाहन के साधन के रूप में व्यय की दृष्टि से यह सस्ता भी पड़ता है। यही कारण है कि उन देशों में भी जहाँ सड़कें सुन्दर सुस्थिर और अच्छी बनी हैं, तथा जिन देशों में मोटरों का सर्वाधिक मात्रा में निर्माण होता है, रेल की आवश्यकता अक्षुण्य बनी हुई है। उदाहरण के रूप में इंगलैण्ड का नाम उपस्थित किया जा सकता है।

रेलें सवारी और माल दोनों ढोने के काम में आती हैं। प्रत्येक देश में इनकी आवश्यकता का अनुभव किया जाता है केवल इसलिए नहीं कि लम्बी यात्रा के लिए तथा सुदूर प्रदेश में माल भेजने के लिए ये आवागमन के सबसे सस्ते साधन के रूप में काम आती हैं बल्कि इसलिए भी कि बड़े-बड़े विशालकाय सामान के परिवाहन का अब भी यह एक मात्र साधन बनी हुई है। कुछ तो व्यापार भी रेलों के आधार पर चल रहे हैं उदाहरण के रूप में कोयले के व्यापार को गिनाया जा सकता है। रेलवे उद्योग अनेक अन्य उद्योगों को प्रश्रय दिये बैठा है तथा इस उद्योग में काम करनेवाले इतने व्यक्तियों का भरण-पोषण इस उद्योग से होता है; कि उस देश के श्रम का एक बहुत बड़ा भाग इस उद्योग में लगा रह कर अपना जीवन यापन करता रहता है।

युद्ध के समय में राष्ट्र के लिये इनकी जो उपयोगिता है ,उसका अनुभव इस युद्ध में संसार के सभी राष्ट्रों ने किया है। युद्ध के समय इनकी उपयोगिता इस बात से ही प्रमाणित हो जाती है कि भारत में लोगों को सवारी गाड़ी की कमी के कारण रेलों में खड़े होने तक की जगह नहीं मिलती थी क्योंकि सामरिक-कार्य के लिए रेलें बहुत बड़ी मात्रा में उपयोग में लायी जा रही थीं। युद्ध के लिए आवश्यक सामान एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जा रहा था; सैनिक भेजे जा रहे थे। पाकिस्तान के विभाजन के बाद शरणार्थी निष्क्रमण में रेलों द्वारा जो सहायता पहुँचायी गयी, उन संकट की घड़ियों में जितने जान और माल की

रक्षा की जा सकी; वह सेवा मानव के इतिहास में अपना स्थान रखता है।

लम्बी यात्रा के लिए बड़े-बड़े सामानों के परिवाहन के लिए अन्य कोई भी साधन रेलों के अतिरिक्त दीखता नहीं। इसलिये रेलों की महत्ता तथा आवश्यकता अक्षुण्य है और रहेगी।

रेल--वाष्पचालित इञ्जन का आविष्कार इंजन से बहुत पहले हो चुका था। यह इंजन अपने स्थान पर आटे के डीजल इंजन की भाँति का था, पर चल नहीं सकता था। अनेकों ने इसको स्वचालित इंजन बनाने का प्रयत्न किया। इनमें मिस्र के हीरो, फ्रांस के कगनो (Cugnot) और अमेरिका के इवेंस के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। वाष्पचालित इंजन के आविष्कार का श्रेय जेम्स-वाट को मिला। जेम्स वाट का इंजन पहले के आविष्कारकों से अच्छा था। जेम्स वाट के इंजन को बहुत कुछ आधुनिक रूप देने तथा उसमें सुधार करने का श्रेय स्टीफेन्सन ही को देते हैं, पर वास्तव में स्टीफेन्सन इसका आविष्कारक नहीं परिष्कारकर्त्ता था। अपने जीवन में उसने इंजन में इतने सुधार किये कि इंजन के आविष्कारकर्त्ता के रूप में लोग उसे ही जानते हैं।

स्टीफेन्सन के बनाये हुए इंजन के रूप में बहुत परिवर्त्तन हो चुका है तथापि सिद्धान्त वही चल रहा है।

प्रत्येक इंजन का निर्माण निम्नलिखित भागों के सम्मिलन से होता है :--

बॉयलर (Boiler), स्टीम-चेस्ट (Steam chest), फिसलनेवाला ढक्कन (Slide valve), सिलिन्डर (Cylinder), भारी पहिया (Fly-wheel)।

रेल का इंजन भाप से चलता है, इसलिए उसके संचालन के लिए पर्याप्त मात्रा में भाप तैयार करने की आवश्यकता पड़ती है। बॉयलर का बहुत बड़ा भाग इंजन ही होता है। बॉयलर में पानी खौलता है और खौल कर भाप के रूप में बदल जाता है। यह भाप धातु की (प्रायः तांबेकी) एक नली (ट्यूब) द्वारा एक कोठरी में, जिसे 'स्टीम-चेस्ट' कहते हैं, एकत्र होती है। भाप सिर्फ एक ही मार्ग से स्टीम-चेस्ट में आती है, पर इसके निकलने के तीन रास्ते होते हैं। इन छिद्रों से होकर भाप बाहर जाती है। धातु की नली में एक टोटी लगी रहती है, जिससे भाप

का आना-जाना नियन्त्रित होता है । तीन छिद्रों में से एक छिद्र 'एक्ज़ास्ट-पाइप' (Exhaust Pipe) में खुलता है । इसके द्वारा भाप बाहर जाती है । बाकी दो छिद्रों द्वारा भाप सिलिन्डर में आती है । सिलिन्डर एक प्रकार का खोखला बेलन होता है, जो मजबूत लोहे का बना होता है । इसके साथ एक पिस्टन लगा रहता है । सिलिन्डर में भाप के दबाव के कारण पिस्टन आगे बढ़ता है और आगे बढ़ने के कारण भाप का प्रवेश इसी छिद्र द्वारा पुनः पिस्टन में होता है । इससे पिस्टन भाप की शक्ति तथा फ्लाई-ह्वील (Fly-wheel) की सहायता से पुनः वापस आ जाता है । पिस्टन के बाहर की ओर एक डण्डा होता है, जिसे क्रैंक-शाफ्ट (Crank-shaft) कहते हैं । इसका एक सिरा पिस्टन से और दूसरा सिरा फ्लाई-व्हील से जुड़ा होता है । भाप द्वारा जब पिस्टन आगे-पीछे चलने लगता है तो क्रैंक-शाफ्ट और फ्लाई-व्हील उसके आगे-पीछे होने में सहायता पहुँचाते हैं और इस तरह से पहियों में गति उत्पन्न हो जाती है । स्लाइड-वाल्व D की शक्ल का होता है । इसका कार्य स्टीम-चेस्ट के दो छिद्रों को एक साथ बंद रखना है । बॉय-लर के भीतर भाप के दबाव का नियन्त्रण करने के लिए एक सुरक्षा की टोंटी (Safety-valve) होती है । भाप अधिक हो जाने पर इस टोंटी द्वारा स्वयं ही निकल जाती है ।

बचाव की टोंटी (Safety-valve) के कारण भाप की मात्रा आवश्यकता से अधिक नहीं हो पाती । ड्राइवर का पहला कार्य भट्ठी को जलवा कर भाप तैयार कराना होता है । जब भाप तैयार हो जाती है तब वह भाप को सिलिन्डर के अन्दर जाने देता है, जिससे पिस्टन में और पिस्टन से पहियों में गति उत्पन्न होती है और इन्जन चलने लगता है । रेलगाड़ी की गति इंजन की मजबूती और भाप की मात्रा पर निर्भर करती है । चलती हुई गाड़ी को रोकने के लिए 'वैकुअम ब्रेक' (Vacu-umbrake) होते हैं । इनके द्वारा गाड़ी बहुत जल्दी रुक जाती है । वैकुअम ब्रेक हवा के दबाव से खिंचता है । सिलिन्डर का सम्बन्ध एक पिस्टन से होता है । यह पिस्टन जब गाड़ी चलती होती है, तो नीचे की ओर रहता है । इस पिस्टन से सम्ब-न्धित एक रबर की नली होती है, जिसका सम्बन्ध गाड़ी के प्रत्येक डिब्बे से होता है । प्रत्येक डिब्बे में खतरे की जंजीर होती है । रबर की नली का सम्बन्ध इसी खतरे

की जंजीर से होता है । जब कोई यात्री जंजीर खींचता है,तब रबर में छेद हो जाता है और हवा सिलिन्डर में भर कर ऊपर ढकेल देती है, जिससे सारे लोहे के ब्रेक पहियों में चिपट जाते हैं और गाड़ी रुक जाती है

इंजन ड्राइवर को बहुत सावधान होकर चलाना पड़ता है, क्योंकि हजारों व्यक्तियों के जीवन का उत्तरदायित्व तथा बहुत बड़ी सम्पत्ति की रक्षा का भार उसके हाथोंमें होता है । रेल दुर्घटनाएँ अधिकतर सिगनलमैन की गलती तथा पटरी के स्क्रू आदि ढीले होने के कारण होती हैं । यदि ड्राइवर सावधान रहे तो वह इन दोनों खतरों से गाड़ी को बचा सकता है । रेल का इंजन बाहरी गरमी से चलता है, इसलिये इसे 'वाह्य ताप चालित' (External Combustion) इंजन कहते हैं ।

भारत की सवारी गाड़ियों में प्रथम, द्वितीय, इन्टर और तृतीय क्लास होते हैं । अधिक यात्री तृतीय श्रेणी में चलते हैं और इसी श्रेणी से सबसे अधिक आय होती है, पर तृतीय श्रेणी के यात्रियों के लिए बहुत ही कम सुविधाएँ प्राप्त हैं । जनता एक्सप्रेस के कुछ डिब्बों में पंखे और पानी का प्रबन्ध हो गया है, पर अन्य देशों की रेलों में यात्रियों को काफी सुविधाएँ प्राप्त हैं । अब सरकार लम्बी यात्रावाले यात्रियों के लिए कुछ सुविधाएँ देने लगी है । तृतीय श्रेणी के सभी डिब्बों और मुसाफिर-खानों में पंखे और पानी के प्रबन्ध होने की सम्भावना है । अनेक स्थानों पर यह सुविधा अब प्राप्त है । आजकल गाड़ियों में भीड़ दिखलाई पड़ती है । इसका कारण यह है कि एक तो देश के विभाजन के कारण गाड़ियाँ कुछ कम हो गयी हैं और दूसरे यात्रा करनेवालों की संख्या भी बहुत बढ़ गयी है । यह भीड़ युद्ध के समय बढ़ी, क्योंकि रेलें सामरिक कार्यों में लग गयी थीं । भारत सरकार ने 'सिलवर-ऐरो' किस्म के कुछ डिब्बे बनवाये हैं । सभी लोगों के लिए इसका प्रबन्ध हो जाने पर भारत इस क्षेत्र में विदेशों के समान यात्रियों को सुविधा देने में एक कदम आगे बढ़ेगा ।

विद्युत रेल—पहले लोगों का विचार था कि भारत में विद्युत रेल-गाड़ी बहुत खर्चीली पड़ेगी और इसी कारण इसके प्रचलन में देर हुई । यदि विद्युत-शक्ति बहुत सस्ते मूल्य पर उत्पन्न हो तो विद्युत-रेलगाड़ी वाष्प-चालित

इंजन से सस्ती पड़ती है । सब स्थानों में विद्युत के अभाव के कारण इसको चलाया नहीं जा सकता । बम्बई प्रान्त में, जहाँ पश्चिमी घाट के पानी से विद्युत-शक्ति तैयार की जाती है, सस्ती विद्युत-शक्ति उपलब्ध होने के कारण ही इसको चलाया जा सका है । बम्बई में शहर के बाहरी भागों से सम्बन्ध बनाये रखने के लिए दो-दो, चार-चार मील पर स्टेशन हैं, जहाँ थोड़ी-थोड़ी देर पर बराबर विद्युत संचालित रेलें आया जाया करती हैं । बम्बई नगर में बहुत कम जगह होने के कारण लाखों आदमी नगर के बाहरी भागों (Suberbuns) में रहते हैं, पर इन जल्दी-जल्दी आने-जानेवाली रेलगाड़ियों के कारण ऐसा मालूम-होता है कि वे बम्बई नगर के अन्दर ही रहते हैं । इस देश में विद्युतरेलगाड़ी पहले-पहल बम्बई और कुरला के बीच सन् १९२५ में चलाई गई थी; परन्तु बड़े पैमाने पर इसका प्रयोग ५ नवम्बर सन् १९२९ में हुआ, जब पूना और कल्यान के बीच विद्युत रेलगाड़ी चलाई गई । इन गाड़ियों में गति भी बहुत तेज होती है और गति को शीघ्र नियंत्रित कर उसे कम या अधिक किया जा सकता है । भाप द्वारा चालित इंजनों से खराब धुंआ निकलता है । इंजनों से निकले धूएँ घने और विषैले होते हैं जो आसपास की वायु को दूषित कर देते हैं, लेकिन विद्युत-रेलगाड़ी में इस प्रकार का कोई खतरा नहीं ।

ट्रामकार

ट्रामकार आगे-पीछे दोनों ओर एक ही रफ्तार से चलती है, क्योंकि इसको चलाने के लिए दोनों ओर प्रबन्ध रहता है । किसी भी स्टेशन से गाड़ी को पीछे ले जाने के लिए चालक को उतर कर दूसरी तरफ चला जाना पड़ता है । इंजन घुमाने की आवश्यकता नहीं पड़ती । विद्युत-गाड़ियों को बिजली संचालिका-शक्ति के रूप में ऊपर लगे हुए तारों से मिलती है । ट्रामकार के ऊपर एक डंडा लगा होता है जो चलते समय ऊपर के तार से सटा रहता है । विद्युत-गाड़ियों के इंजनों का भी ऊपर वाले तार से सम्बन्ध रहता है, क्योंकि इन्हीं से इन्हें विद्युत-शक्ति प्राप्त होती रहती है । जब तार से सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता है तब गाड़ी अपने आप रुक जाती है । इन गाड़ियों को विद्युतशक्ति देने के लिए बड़े-बड़े केन्द्रीय स्टेशन होते हैं ।

विद्युत की रेलगाड़ी में यदि सस्ती विद्युत उपलब्ध हो, तो अनेक लाभ हैं। एक तो दो आदमी के बजाय एक ही आदमी से काम चल जाता है। दूसरे विषैले धुएँ का अभाव रहता है। गाड़ी रेल से हटते ही स्वयं, विद्युतशक्ति के अभाव में, रुक जाती है। इंजनों की संख्या आवश्यकतानुसार घटाई और बढ़ाई जा सकती है। वाष्पचालित इंजनों को बराबर गर्म रखना पड़ता है। स्टेशन पर जितनी देर गाड़ी खड़ी रहती है, शक्ति का अपव्यय होता है, पर विद्युत-गाड़ियों में ये सब असुविधाएँ नहीं हैं। विद्युत का बटन दबाते ही पहिये चलते और रुक जाते हैं। आवश्यकता उसके ही विद्युत खर्च होती है। विद्युत-रेलगाड़ी सुरंगों और खानों के लिए अत्यन्त ही लाभदायक सिद्ध हुई हैं। सुरंगों और खानों में भाप के इंजनों से हवा के दूषित होने तथा आग लगने का अधिक खतरा था पर विद्युत-रेलगाड़ियों से दोनों असुविधाएँ दूर हो गईं। भारत में अजस्रविद्युत उत्पन्न करने के साधन जल-स्रोतों के रूप में उपलब्ध हैं, जिनकी ओर तत्परता से सरकार योजनाबद्ध रूप में संलग्न है। विभिन्न बाँधों के निर्माण से जो बिजली पैदा होगी, वह इस उद्योग की अभिवृद्धि में अत्यन्त सहायक प्रमाणित होगी।

विश्व के बड़े-बड़े नगरों में जहाँ की सड़कों पर भारी ट्रैफिक के कारण स्थान का अभाव है, विद्युत-रेलगाड़ियों ने ट्रैफिक की समस्या बहुत कुछ हल कर दी है। वहाँ धरती के नीचे लोहे की सुरंगें हैं जिनके अन्दर विद्युत-रेलगाड़ियाँ बराबर चला करती हैं। एकान्त के कारण इनकी गति बहुत तेज होती है। जब एक रेलगाड़ी सुरंग के अन्दर होती है तो सुरंग में अँधेरा हो जाता है और गाड़ी के दरवाजे आदि भी नहीं खुल पाते हैं। इससे दुर्घटनाओं की सम्भावनाएँ बहुत कम हो गयी हैं। सुरंगों के अन्दर खतरे के सिगनल ऐसे बने हैं कि यदि ड्राइवर लापरवाही कर भी जाय तो गाड़ी स्वयं ही खतरे के सिगनल के पास खड़ी हो जाती है। लंदन में टेम्स नदी के नीचे भी विद्युत की रेलगाड़ियाँ चलती हैं। लंदन में एक रेलगाड़ी ऐसी है जो बिना ड्राइवर के ही स्वयं चलती और रुकती है। यह डाक ले जाने के लिए है। अमेरिका में सड़क के ऊपर बिजली के तारों से लटकते हुए डिब्बे भी चलते हैं। यह सब यातायात के साधनों में उन्नति के लक्षण हैं और अभी अनेक नये प्रयोग सभ्यता के विकास के साथ-साथ होंगे।

भारत में रेलगाड़ी

भारत में सर्वप्रथम १८३१-३२ में ही मद्रास प्रेसीडेन्सी में रेलवे के निर्माण के विचार का उदय हुआ। कावेरीपट्टम से गरुर तक रेल की पटरी सड़क के किनारे-किनारे बिछाने का विचार उपस्थित किया गया। इन दो स्थानों के बीच की दूरी १५० मील थी। पर इसका श्रीगणेश १८४४ से मानना चाहिए, क्योंकि ईस्ट इंडिया कम्पनी ने एक लाइन कलकत्ता से उसके पश्चिमोत्तर की ओर और दूसरी लाइन बम्बई से पूर्वोत्तर की ओर बनाने की स्वीकृति दी।

बम्बई-कल्यान की रेलवे लाइन की प्रायोगिक सफलता पर दूसरी लाइन जिसका निर्माण भारतवर्ष में हुआ, वह कलकत्ते से पण्डुआ तक थी। इसका निर्माण १८५४ में हुआ। तीसरी लाइन मद्रास से अक्रोणम तक जुलाई १८५६ में चालित की गयी।

सर्वप्रथम भारतवर्ष में रेलगाड़ी चलाने के प्रस्ताव पर विचार सन् १८४४ में हुआ था, पर वह सन् १८५३ में कार्य रूप में परणित किया गया। परिवाहन के क्षेत्र में भारत के इतिहास में यहाँ से आधुनिक अध्याय जुटता है। परिवाहन के लिए पहले-पहल सन् १८५३ में २२ मील लम्बी बम्बई-कल्यान लाइन प्रारंभ की गई। इसके बाद दो और रेल की लाइनें कलकत्ता से रानीगंज तक (१२० मील लम्बी) और मद्रास से आर्कोनम तक (३९ मील लम्बी) बनाई गईं।

लार्ड डलहौजी के समय में ही रेलों का काफी विकास हो चुका था। प्रारंभ में रेल पर व्यक्तिगत संस्थानों एवं व्यक्तिगत सत्वाधिकार था। सरकार द्वारा भारत में रेलों के विकास के लिए व्यक्तिगत पूंजी को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया गया; परन्तु अब रेल राष्ट्रीय उद्योग है। इसमें लगभग ६७२ करोड़ की पूंजी लगी है। इस दृष्टि से भारत का यह राष्ट्रीय उद्योग संसार के उद्योगों में बृहत्तम उद्योग की सीमा के भीतर आता है। यह उद्योग संसार के सबसे बड़े उद्योगों में से एक है। लम्बाई की दृष्टि से संसार में प्रथम स्थान संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका का, द्वितीय स्थान सोवियत संघ का और तीसरा स्थान कनाडा का और

भारत को चौथा स्थान प्राप्त है। इस देश में लगभग ७२००० रेलवे स्टेशन हैं और यहाँ की रेलें प्रति वर्ष १०००० लाख यात्री और १००० लाख टन सामान का परिवहन करती हैं। इस देश में रेलवे लाइनों की कुल लम्बाई ३३८६५ मील है।

पटरियों के बीच की चौड़ाई--रेल की पटरियों के बीच की चौड़ाई को व्यक्त करने के लिए 'गाज' (Gauge) शब्द का व्यवहार किया जाता है। ये चार प्रकार के होते हैं, जो २' से ५'-६" तक के भीतर होते हैं। भारत में अधिकांश ब्राड गाज की रेलें हैं, जिनकी पटरियों के बीच की चौड़ाई ५'-६" है। सन् १८७० में व्यय कम करने की दृष्टि से मीटर गाज यानी ३'-३$\frac{3}{8}$" चौड़ी पटरियाँ बिछाई गई और तब से कई स्थान पर मीटर गाज की रेलों की पटरियाँ उपयोग में लायी गयीं। कम महत्त्व के स्थानों को महत्त्वपूर्ण स्थानों से सम्बन्धित करने के लिए तथा पहाड़ी स्थानों में २ फीट से लेकर २ फीट ६ इंच चौड़ी पटरियाँ बिछाई गईं। पटरियों की चौड़ाई की दृष्टि से विचार करने पर भारतवर्ष का स्थान प्रथम है। विदेशों में आमतौर से पटरियों के बीच की चौड़ाई ४'-८$\frac{1}{2}$" है।

उद्देश्य:--भारतवर्ष में रेल-निर्माण के उद्देश्यों में प्रमुखतम ध्येय शासन को सुदृढ़ बनाना रहा है। अंग्रेजों का सबसे बड़ा उद्देश्य देश को अपने अधिकार में रखना था; इसलिए रेलें बनाते समय सैनिक महत्त्व के स्थानों पर विशेष ध्यान रखा गया। सभी सैनिक महत्त्व के स्थानों का सम्बन्ध एक-दूसरे से जोड़ा गया, ताकि आवश्यकतानुसार सेना तथा अन्य कुमक शीघ्र एक स्थान से दूसरे आवश्यकता के स्थान को भेजी जा सके।

देश के उद्योग और व्यापार के विकास के लिये तथा यात्रियों के यातायात की सुविधा के लिए भी रेलें बनाई गईं।

भारतवर्ष कृषिप्रधान देश है; पर कृषि मुख्यतः वर्षा पर निर्भर करती है। सूखे दिनों में दुर्भिक्ष से रक्षा के लिए कुछ रेलों का निर्माण हुआ। इनका उद्देश्य ही यह था कि यदि देश के किसी भाग में दुर्भिक्ष पड़े तो शीघ्र अकालग्रस्त क्षेत्रों में खाद्यान्न की सहायता दी जा सके। इस प्रकार की रेलों का निर्माण सन् १८७८ के भयानक अकाल के परिणाम को देखकर ही हुआ है। ऐसे अवसर से लाभ

यह होता है कि कम खर्च पर मजदूर मिल जाते हैं और सस्ते में रेलवे लाइन तैयार हो जाती है।

भारत में अब रेलों का जाल-सा बिछ गया है। आधुनिक युग में रेल का होना या न होना किसी देश की सभ्यता तथा व्यापारिक उन्नति का माप बन गया है। किसी देश की रेलों और उनका प्रबन्ध उस देश की व्यापारिक तथा औद्योगिक प्रगति का प्रतीक है। इसके अतिरिक्त रेलों द्वारा जन-संपर्क और विचारों का आदान-प्रदान भी बहुत बढ़ गया है। देश को एक इकाई में बाँधने का सफल एवं स्तुत्य प्रयत्न इन रेलों द्वारा हुआ है। अनेक सामाजिक कुरीतियों का उच्छेदन करने में भी ये सहायक हुई हैं यथा जाति-पाँति एवं छुआछूत के भेदभाव को दूर करने में भी इनका महत्त्वपूर्ण भाग रहा है।

प्रमुख रेलें—भारतवर्ष में निम्नलिखित रेलें हैं:—

आसाम रेलवे, ईस्ट इण्डियन रेलवे, अवध तिरहुत रेलवे, ईस्ट पंजाब रेलवे, बंगाल नागपुर रेलवे, बाम्बे बड़ोदा ऐंड सेन्ट्रल इण्डिया रेलवे, ग्रेट इण्डियन पेनिन्शुला रेलवे, मद्रास एंड सदर्न मराठा रेलवे, साउथ इण्डियन रेलवे। ये नाम पहले के हैं जो क्षेत्र के आधार पर हैं। अब वे जोन्स में विभाजित कर दी गयी हैं।

आसाम रेलवे सम्पूर्ण आसामी क्षेत्रों के लिए है। ईस्ट इण्डियन रेलवे का अधिकांश भाग गंगा की घाटी के क्षेत्र में है। चाय और जूट के स्थानान्तरित करने का ये साधन हैं। यह बंगाल और बिहार के कोयले के खानोंवाले प्रदेश से होकर जाती है तथा भारत की औद्योगिक प्रगति में सहायता पहुँचाती है। इसीके द्वारा गंगा की घाटी की उपज (कच्चा माल) कलकत्ता तथा उत्तर भारत के औद्योगिक नगरों को भेजा जाता है। ग्रेट इंडियन पेनिन्शुला रेलवे कपास और तेलहन के क्षेत्रों को बम्बई के बंदरगाह से जोड़ती है। अवध तिरहुत रेलवे चीनी और शहतीर वाले प्रदेशों के लिए है। चीनी उद्योग इसी रेल के किनारे हैं। बंगाल नागपुर रेलवे भारतवर्ष के कोयला, मैंगनीज और लोहा आदि खनिज पदार्थ उत्पन्न करनेवाले क्षेत्रों का सम्बन्ध कलकत्ता और विजिगापट्टम के बंदर से स्थापित करती है। साउथ इण्डियन रेलवे मद्रास और धनुषकोटि को जोड़ती

है । इसके द्वारा तीर्थयात्री यात्रा भी करते हैं । यह लाइन तीर्थयात्रियों कीसुविधा तथा उनसे होनेवाली आय को ध्यान में रखकर बनायी गयी है । इसी तरह से अन्य रेलें भी या तो व्यापारिक लाभ या धार्मिक-आय या रक्षा की दृष्टि से बनी हैं । क्षेत्रों के आधार पर ही अधिकतर उनके नाम हैं । ईस्ट इण्डियन रेलवे सबसे अधिक कार्य-व्यस्त रहती है ।

प्रबन्ध और पूँजी

प्रारंभ में सन् १८४४ से १८६८ तक भारत में रेलों का निर्माण ब्रिटिश कम्पनियों द्वारा हुआ । उन्हें यह सरकारी आश्वासन प्राप्त था कि कम से कम ४$\frac{१}{४}$%५ से तक पूंजी पर लाभ होगा । सरकार ने उन्हें बिना मूल्य के रेलवे-लाइनों के निर्माण के लिए भूमि प्रदान की । साथ में सरकार ने यह अधिकार अपने पास सुरक्षित रखा कि अगर वह चाहेगी तो कुछ शर्तों पर २५ से ५० वर्ष के भीतर लाइन क्रय कर लेगी । सन् १८६९ तक ४२५५ मील रेल की पटरियाँ बिछ चुकी थीं, जिनमें ८९ करोड़ रुपये की पूंजी लगायी जा चुकी थी । इस संरक्षण नीति के कारण सरकार को बहुत बड़ी हानि उठानी पड़ी । सन् १८६९ तक सरकार को एक करोड़ सात लाख रुपयों की हानि उठानी पड़ी ।

तत्पश्चात् सरकार ने स्वयं रेलवे लाइन के निर्माण, प्रबर्द्धन एवं प्रबन्ध तथा स्वामित्व का भार अपने ऊपर ले लिया ।

इस भाँति सरकार ने स्वयं अपने द्वारा सन् १८६९ से १८७९ के बीच २१७५ मील रेलवे लाइन का निर्माण कराया । सरकार को इस कार्य में सफलता नहीं मिली, क्योंकि उसकी बहुत बड़ी धन-राशि ऐसे कार्यों में फँस गयी, जिससे उसको लाभ के स्थान पर हानि ही उठानी पड़ी । राजनीतिक स्थिति तथा आर्थिक स्थिति भी उस समय ऐसी नहीं थी कि इतनी बड़ी धन-राशि रेलों के निर्माण में व्यय की जाय । १८७४-१८७८ में देश में भयंकर एवं व्यापक अकाल पड़ा । १८७८ के अकाल-कमीशन ने सुझाव दिया कि अविलम्ब द्रुतगति से रेलों का निर्माण कार्य अकाल पीड़ितों के लिये सहायक सिद्ध होगा । रेलकीनीति पर पुनः सरकार ने विचार किया और रेलों का प्रबन्ध पुरानी कम्पनियों के जिम्मे सौंप दिया गया । १८७९ में सरकार ने ईस्ट इंडियन रेलवे का प्रबन्ध भी

पुनः पुरानी कम्पनी को सौंप दिया। इस रेल को सरकार ने खरीदा था।

बाद में सरकार ने ई० आई० रेलवे, एस० आई, जी० आई० पी०, बी० बी०, एण्ड सी० आई, एस० एम०, और बी० एन०, रेलों को ले लिया, पर उसका प्रबन्ध उन्हीं पुरानी कम्पनियों के जिम्मे रहा। ई० बी०, ओ० आर०, तथा सिन्ध, पंजाब और दिल्ली प्रदेशों की रेलों को सरकार ने खरीद लिया और उसका प्रबन्ध स्वयं अपने जिम्मे ले लिया। बंगाल सेण्ट्रल लाइन को भी सरकार ने खरीद लिया और उसे ई० बी० रेलवे में मिला दिया। मद्रास और इण्डियन मिड लैण्ड लाइनों को सरकार ने अपने अधिकार में ले लिया और इनका प्रबन्ध समीपस्थ रेलों के प्रबन्धकों को सौंप दिया।

बीसवीं सदी के आरम्भ से भारत की रेलों में नया अध्याय प्रारंभ होता है। सन् १६०१ में मिस्टर राबर्टसन की अध्यक्षता में रेलवेसम्बन्धी जाँचों के लिए एक विशेष समिति नियुक्त की गई। इस समिति ने भारत में रेलों के उत्थान के लिए प्रबन्ध की दोहरी नीति की भर्त्सना की, तथा सुझाव उपस्थित किया कि सरकार द्वारा रेलों को लीज पर दे देना चाहिए। साथ ही भारतीयों के के प्रति योरोपियों की अपेक्षा बरती जानेवाली अभद्र नीति के कारण जनता इसकी भर्त्सना करती रही; लेकिन विदेशी शासन पर इसका तनिक प्रभाव न पड़ा और सन् १६२१ तक वही पुरानी नीति चलती रही।

सन् १६२१ में विलियम अकवर्थ के सभापतित्व में एक रेलवे जाँच-समिति नियुक्त की गई, जिसने अपनी रिपोर्ट में निजी कम्पनियों के प्रबन्धों को सरकार के प्रबन्ध में लेने की सिफारिश की थी।

सन् १६२३ में इण्डियन लेजिस्लेटिव असेम्बली में यह प्रस्ताव पेश हुआ कि रेलों का प्रबन्ध केवल सरकार के हाथ में होना चाहिए। परिणामस्वरूप सन् १६२५ में ईस्ट इण्डियन रेलवे और जी० ई० पी० रेलवे का प्रबन्ध सरकार ने अपने हाथ में ले लिया। अब रेलों का राष्ट्रीकरण हो गया है और इनका प्रबन्ध।

केन्द्रीय सरकार के वार्तावाहन सचिवालय की देख-रेख में होता है। सन् १६५१ से भारत के स्वतंत्र हो जाने पर रेलवे-विभाग नये ढंग से संचालित किया जा रहा है। पहले रेलवे के प्रधान कमिश्नर हुआ करते थे। सन् १६५१ में

यह पद समाप्त कर दिया गया और नये रेलवे बोर्ड में तीन कार्यकारी सदस्य और फिनान्स कमिश्नर रक्खे गये ; यातायात मिनिस्ट्री के सचिव पदेन उसके सदस्य होते हैं । कार्यकारी मेम्बरों में से एक बोर्ड का अध्यक्ष होता है और सचिवालय में रेलवे-सचिव का भी कार्य करता है । आर्थिक मामलों में फिनान्स कमिश्नर के पद की मर्यादा सचिव के समकक्ष मानी जाती है । इस व्यवस्था से वार्तावाहन मंत्री रेलवे-विभाग से निकट सम्पर्क में रहता है ।

सन् १८९० के रेलवे कानून के अनुसार सरकार के हाथ में अनेक विशेष अधिकार पर्यवेक्षण और नियंत्रण के सुरक्षित रहते हैं । इस विशेष अधिकार का प्रयोग रेलवे बोर्ड द्वारा, या इसकी सामान्य प्रबन्ध-व्यवस्था द्वारा या यातायात संचालकों (डाइरेक्टर्स आफ ट्रैफिक्स) द्वारा किया जाता है ।

रेलों की देन

मानव ने विश्व में जितनी चीजों का निर्माण किया है, उसमें मूलतः आत्म-कल्याण का स्वार्थ निहित है । रेलों के सम्बन्ध में भी यही बात कही जा सकती है । नये युग का द्वार खोलने में रेलों ने जो सहायता पहुँचाई है, वह अपने ढंग की विश्व के इतिहास में अकेली है ।

लम्बे यातायात में सवारी गाड़ी के रूप में जन-साधारण के लिये दूरी को समेटने में इसके द्वारा सहायता मिली है, तथा इसके द्वारा राष्ट्रीय भावना के विकास में सहायता मिली है । देश का बहुत बड़ा श्रम इस महान् उद्योग में लगा रहता है, इसलिये रोजी और रोटी की व्यवस्था भी इसके द्वारा होती है । अकाल के समय एक स्थान से दूसरे स्थान पर सामग्री पहुँचा कर ये रेलें कितनों को अकाल-कवलित होने से बचा लेती हैं । रेलवे के किनारे, प्लेट-फार्म, आराम-गृह आदि की व्यवस्था रहती है, जिसके कारण यात्री दूर जाकर भी अनेक सामान्य संकटों से बच जाता है । साथ ही रेल में जो सामान आदि बिकते हैं वह बहुत जाँच-पड़ताल करके; इसलिए यात्रियों के स्वास्थ का ध्यान बाजार सड़क आदि के यातायात के साधनों की अपेक्षा अधिक रहता है ।

व्यापारी वर्गों की तथा देश के औद्योगिक उत्थान की प्रगति में इनके द्वारा जो योगदान किया गया है, वह अप्रतिम है । रेलों ने बहुत से ऐसे स्थानों को

औद्योगिक केन्द्रों से सम्बद्ध कर उनका मूल्य बढ़ा दिया है, जिनका मूल्य नहीं के बराबर था। उन स्थानों पर उत्पन्न कच्चे माल के लिए इन्होंने बाजार तो बनाया ही है, साथ ही विशाल सामग्रियों के परिवाहन के लिये द्वार खोल कर उस क्षेत्र के आर्थिक अभ्युदय और कल्याण के लिए जनहित का कार्य भी किया है। ऐसी वस्तुएँ जो कच्ची समझी जाती हैं तथा जो नष्ट होने वाले स्वभाव की हैं, रेलों द्वारा उन्हें भी, 'एयर कण्डीशण्ड डिब्बों' में भेज कर उनके लिये अच्छा बाजार बनाया जाता है। माल का भाड़ा भी रेलों द्वारा सस्ता पड़ता है जिससे समय और धन की बचत होती है। जगह-जगह पर माल-गोदाम आदि की व्यवस्था होती है, जिसमें निश्चित अवधि तक रेलों द्वारा भेजे सामान सुरक्षित तो रहते ही हैं, उनका कोई मूल्य भी नहीं देना पड़ता। सामान खो जाने पर रेलों के ऊपर उनका दायित्व रहता है जिससे एक प्रकार का बीमा का कार्य कम्पनियाँ करती हैं। बहुत से तो औद्योगिक सामान ऐसे हैं जिनका भेजा जाना रेलों के अभाव में असम्भव कार्य है। शक्ति के नये स्रोतों का पता चल जाने के पश्चात् संसार में शक्ति के प्रयोग के रूप में कोयले का महत्व दिनोत्तर घटता रहा है; पर रेलवे उद्योग में इतना अधिक कोयले का खर्च होता है कि आज भी कोयला उद्योग की महत्ता अक्षुण्य बनी हुई है तथा उसी के बल पर वह उद्योग फल-फूल रहा है।

युद्ध के समय रेलों ने सैनिकों आदि को तथा बड़े-बड़े सामानों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचा कर जो सेवा की है वह किसी से छिपी नहीं है। और यहाँ तक कहा जा सकता है कि देश के भीतर शान्ति-स्थापन आदि के कार्यों में भी रेलों ने योग दिया है। भारत को तो आधुनिक युग में राजनीतिक, सामाजिक, तथा सांस्कृतिक सूत्र में बाँधने का जो प्रयत्न रेलों ने किया है, वह सम्भवतः विदेशी सत्ता की सबसे बड़ी देन है। यद्यपि अंग्रेजों द्वारा रेलवे के पटरियों का जाल भारत को अपने जाल में जकड़े रहने के कारण बिछाया गया था, तो भी यह अभि-शाप सामाजिक उत्थान का कारण बन गया। बहुत से लोग विभिन्न प्रान्तों के एक स्थान पर काम करते हैं, जिससे मातृत्व की भावना का विकास होता है। साथ ही श्रमिकों को संगठनबद्ध होने का अवसर मिलता है जिससे पूंजीवादी आघातों से बचने में श्रमिकों को सामूहिक सहानुभूति मिलती है।

यद्यपि वरदानों की ये लड़ियाँ रेलों की देन है, तो भी इनके द्वारा कुछ ऐसे कार्य भी होते हैं, जो हानिप्रद हैं। परन्तु लाभ के मुकाबले में हानियाँ बड़ी हल्की पड़ती हैं, जिनमें से अनेक तो ऐसी हैं जिनका परिष्कार सरलतापूर्वक किया जा सकता है। रेलों के लिए बहुत बड़ी पूंजी की आवश्यकता तो होती है, साथ ही बहुत सी धरती जिनमें से अधिकांश उर्वरा होती हैं, उत्पादन के कार्य में नहीं ली जा सकती। रेलवे लाइन की पटरियों के किनारे की खेती को भी रेल के धुएँ-धड़कम से हानि पहुँचती है। कभी-कभी असावधानी के कारण दुर्घटनाएँ हो जाती हैं, जिनसे जान और माल की पर्याप्त क्षति पहुँचती है। जब आवागमन के विभिन्न साधनों पर अनेक प्रकार का स्वामित्व होता है, तो इनका विकास, आपस में प्रतिस्पर्धा पैदा करता हैं, परिणाम यह होता है कि राष्ट्र की अतुल धन-राशि का अपव्यय होता है तथा प्रतिस्पर्धा में आवश्यकतानुसार मार्गों का विकास नहीं हो पाता। इस राष्ट्रीय अपव्यय की कहानी रेलों के विकास के साथ प्रारम्भ
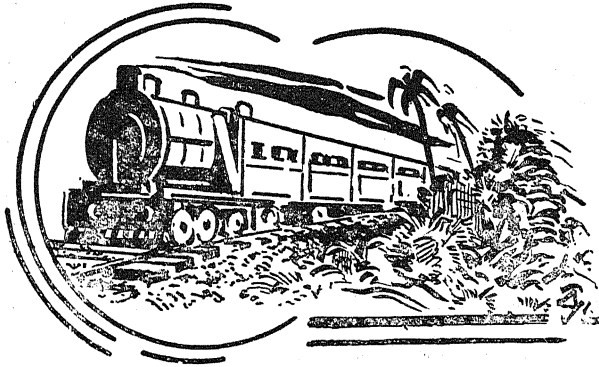
रेलगाड़ी

होती है, क्योंकि सड़कों के विकास में रेलों की विरोधी भावना ने प्रायः संसार के सभी राष्ट्रों में अपनी यह लीला दिखाई है। अंताराष्ट्रीय परिवाहन के माध्यम के रूप में यह सर्वथा असफल रहा है, क्योंकि विभिन्न देशों में, विभिन्न गेजों पर रेलों की पटरियाँ बिछाई गयी हैं।
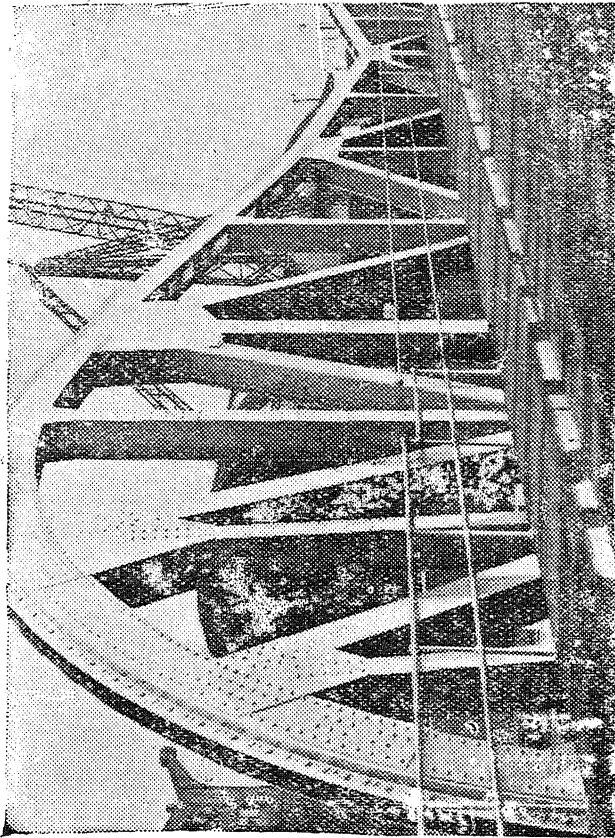
नदियों आदि पर पुल बाँध आधुनिक आवागमन के लिये द्वार खोल दिया गया है, यह आधुनिक ढंग का रेल के लिये पुल है।

यह सब होते हुए भी, देश के भीतर आवागमन के साधन के रूप में इनका अत्यन्त महत्व है, तथा रेलों ने राष्ट्रों को हर दृष्टि से उन्नत बनाने में मानव-मात्र की सेवा की है।

रेल सम्बधी आँकड़े

विश्व में रेलों की लम्बाई अदि के सम्बन्ध में विभिन्न देशों के प्राप्त आँकड़े प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जिससे यह ज्ञात होता है कि परिवाहन के रूप में रेलें आज किस प्रकार विश्व की सेवा कर रही है।

विश्व में रेलें

ब्रिटिश कामन वेल्थ

देश	लम्बाई	यात्रा (१० लाख में)	बोझ (१० लाख टन में)
ग्रेट ब्रिटेन	१६,८५३	१,१४०	२५.७
भारत और पाकिस्तान	४०,५२४	१,१३६	६१.४
मलाया	१,१००		
दक्षिणी अफ्रीका	१३,४५५	२१६	४१.४
ब्रिटिश पूर्वी अफ्रीका	३,०००	—	
,, दक्षिणी पूर्वी ,,	१,४८६		
"पश्चिमी,,	३,०००		
आंग्ल मिश्री सूडान	२,००१		
कनाडा	४३,८२१	४०६	
आस्ट्रेलिया	२७,८२७	५०३	३७.६
न्यूजीलैण्ड	३,७०७	३२५	६.०
संयुक्तराष्ट्र अमेरिका	२२५,८०६	७०६	१६१.३
अर्जेन्टाइना	१६,५००	—	—

बोलोबिया	१,८६७		
ब्राजील	२४,०००	२२३	१.१
चीली	५,२००		
कोलम्बिया	१,९६२		
क्यूबा	२,९८९		
मैक्सिको	१५,०४४		
पीरू	२,७५८		
यूरागुए	१,४७७		
यूरोप			
आस्ट्रिया	४,१६१		
बेलजियम	३,०८९		
चेकोस्लोवाकिया	७,५००		
डेनमार्क	३,०२०		
आयरलैण्ड	२,७८२	२४.९	३.९
फिनलैण्ड	३,००१	२४	१०.५
फ्रान्स	२५,२७१		
फ्रान्स के उपनिवेश	३,६५०		
फ्रान्सीसी हिन्द-चीन	२,०९३		
जर्मनी (पूर्वी पश्चि.)	४२,२९९		
ग्रीस	१,६६८		
हंग्री	५,४२८	४१	२.८
इटली	१३,०००	३००	६९
नीदरलैण्ड	१,८३४		
नीदरलैण्ड इण्डीज	४,६११	९१	
नारवे	२,३००	४७	३.६
पोलैण्ड	१४,४८१		
पूर्तगाल	२,२४०	४२	५

रोमानिया	५,९६२		
स्पेन	१०,८८७	१००	
स्वीडेन	९,०००	१५३	४३
स्वीटजर लैण्ड	३,४५२	२०४	१३
रूस	६७,४७०	१,२३०	५६.८
यूगोस्लोवाकिया	६,६५५		
एशिया			
चीन	८,१३१		
जापान	१५,२५४	१,६३४	१२०
कोरिया	४,१५३		
फारस	१,१७०		
स्याम	१,९२५	७	१०८
टर्की	४,४६२		
अफ्रीका			
यूनान	३,१११	५९	७.५

रेल यात्रा एवं बोझ का मासिक औसत

(१० लाख रुपये में)

देश	१९३९		१९४९		१९५०	
	सवारी किलो	टन किलौ	सवारी किलो	टन किलो	सवारी किलो	टन किलौ
आस्ट्रेलिया	५५४		८४६	८३७		
आस्ट्रिया	३३२		४४४	२९३		४२६
बेलजियम	४५०	४६३	५४६	४७२	५९०	४१२
ब्राजिल	४२८	५०१	७७९	६२८	८०४	५७१
वर्मा	६०.२४	६३.४६	९.९२	१५.१३		
कनाडा	२३५	३८२८	४२०	६८१९	३७५	६१६२

डनमार्क	६३	४५०	९९	५४४	८८	५२०
फ्रान्स	१७०४	२४४२	२४५६	३४२०	२०९२	३००७
वेस्टर्न जर्मनी			२७६६	३७३२	२४५४	३७३८
भारत	२३५९	३१४६	५१४३	३३१७	५३४५	३३३२
इण्डोचीन			६.५		६९	१११
आयरलैण्ड		३६.३		४२.०		३९.६
इटली	९८१	४२८९	१८४१	३२५०	१६५०	३०६६
जापान	३५०५	२०४८	५५८५	२३७५	५८५०	२३५२
नीदरलैण्ड	३३५	१८५	५४०	२३२	५१८	२४२
पाकिस्तान			६८५	३०६		
पोलैण्ड			१७३८	२७१३	१६४२	२५५२
पुर्तगाल	५७२	१८५	३००	२७०	२५७	२८१
स्पेन			६०८	४६१	५६६	५५७
स्वीडेन	२१४	३४८	५२८	६२६	४७६	६१८
स्वीटजरलैण्ड	२६०	१६४	४६६	१४३	४५१	१५१
टर्की	१०७	११५	१८१	१९७	३४०	१७१
युनियन आफ साउथ अफ्रीका		८८१		१४७८		१३९५
युनाइटेड किंगडम				२९७९		३८५३
युनाइटेट स्टेट अमेरिका	३०३८	४०५६८	४७०७	६४०४९	४१८८	६७७०८

विभिन्न भारतीय रेलों की लम्बाई मीलों में

प्रथम वर्ग की रेले

आसाम रेलवे	१२३८,८२
बी० एन० आर०	३,३८८-०२
बीकानेर स्टेट रेलवे	८८३.०५
बी० बी० सी० आई	३,४०३.९८

ई० आई०	१,८७७,५८
ई० पी० आर०	४,३७९.६०
जी० आई० पी०	३,५६०.६६
जोधपुर	१,१२५.७९
एम तथा एस० एम	२९३८.४७
मैसूर स्टेट	७३८,२७
निजाम स्टेट	१३८४.२४
ओ० टी०	३०७३.२६
एस० आई०	२,३४९.२५
	३०३४०-८

द्वितीय वर्ग की रेलें

बरसी लाइट	२०२.५७
गोंन्डाल	११३.४९
दारजीलिंग हिमालय	१४५६.५१
गायकवार, बरौदा	७३६.३८
जयपुर स्टेट	२५३.४७
जाम नगर द्वारका	२११,५३
जूना गढ़ स्टेट	२२९.२२
मोरभी	१७२.५४
सदर सहारनपुर लाईट	६२.५०
	२,५६५,१५

६

भारत में सड़कों की प्रगति

आज भारत में जो सड़कें हमें दिखायी पड़ती हैं या जिनका उपयोग आवागमन के साधन के रूप में होता है वे उन्हीं ढाँचों पर निर्मित सड़कों का विकसित रूप हैं जो हिन्दू शासन, पठान और मुगलशासन के समय निर्मित हुई थीं। नये आधार पर नवीन सड़कों का निर्माण भारत में इधर नहीं के बराबर हुआ है। इन पुरानी सड़कों के विकास की ओर मुख्य रूप से ध्यान आज से लगभग १०० वर्ष पूर्व अंग्रेजी शासन-काल में दिया गया। इस सम्बन्ध में यह ज्ञातव्य है कि उस समय सड़कों की ओर सरकार का ध्यान नाम-मात्र के लिये आकृष्ट हुआ था। वह यातायात के निर्माण के क्षेत्र में अपनी सभी शक्ति रेलों के प्रसार की ओर ही लगाये बैठी थीं। उस समय अंग्रेजों के सामने यह प्रश्न था कि किसी प्रकार अपनी सत्ता भारतवर्ष में स्थायी करें। रेल निश्चित रूप से उनकी इस मनोभावना को साकार करने में अधिक सफल थी। इन उपेक्षित सड़कों को जो अतीत में एक मात्र यात्रा का साधन थीं, अंग्रेजों ने केवल स्थानीय महत्व दिया। उनकी दृष्टि में ये सड़कें निकटस्थ दूरी की यात्रा के लिए उपयुक्त जँची। इस उपेक्षा का परिणाम यहाँ तक हुआ कि सन् १९१९ में सरकार ने सड़कों के संबंध में एक विधान बनाया। उस विधान के द्वारा सड़कें अब राष्ट्रीय विषय न होकर प्रान्तीय विषय बना दी गयीं और सड़कों का भाग्य केन्द्रीय सरकार के हाथों से निकल कर प्रान्तीय सरकारों के हाथ में आ गया। उस विधान के अनुसार केन्द्रीय विषय केवल वे सड़कें रह गयीं जो सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण थीं तथा जो सड़कें अन्तरप्रान्तीय थीं।

इन रास्तों पर चलने वाली गाड़ियों से टैक्स आदि प्रान्तीय सरकारें वसूल करने लगीं तथा उनके सम्वर्द्धन, उन्नयन और विकास का भार भी इन पर ही पड़ा, पर उन्होंने कोई विशेष सेवा बहुत दिनों तक इस क्षेत्र में नहीं की ।

संसार के अन्य देशों की भाँति भारत को भी प्रथम युद्ध ने सड़कों का महत्व समझा दिया । सरकार ने सड़कों की महत्ता का अनुभव किया । बहुत दिनों से इनके सोये भाग्य फिर जगे । मोटरों का उपयोग हमारे देश में भी आरंभ हुआ । प्रमुख औद्योगिक नगरों एवं राज-पथों पर मोटरें दौड़ने लगीं तथा नागरिकों के लिए मोटर एक सामान्य वस्तु समय के साथ-साथ लगने लगी । मोटर आदि के अधिक यातायात का परिणाम यह हुआ कि सड़कें और भी बुरी स्थिति में पहुँचने लगीं ।

इसका परिणाम यह हुआ कि १९२७ में राज्य-परिषद में एक प्रस्ताव सड़कों की बुरी अवस्था पर आया जिसके प्रतिफलस्वरूप श्री जयकर के सभापतित्व में दोनों केन्द्रीय परिषदों ने एक जाँच समिति का निर्माण किया । इस सड़क जाँच समिति को यह कार्य सौंपा गया कि वह सड़कों की वर्तमान अवस्था की जाँच कर रिपोर्ट प्रस्तुत करे ।

सन् १९२८ में जयकर-समिति ने सरकार के सामने अपनी यह संस्तुति उपस्थित की कि प्रान्तीय सरकारों की स्थिति के बाहर है कि इन सड़कों के निर्माण का कार्य कर सकें । स्थानीय संस्थाओं के प्रति भी यही बात कही गयी । उनकी दृष्टि में सड़कें राष्ट्रीय महत्व की वस्तु हैं और इनके लिये केन्द्रीय सरकार को व्यय करना चाहिये ।

कमेटी ने यह भी सुझाव प्रस्तुत किया कि केन्द्रीय सरकार को चाहिये कि केन्द्रीय सड़क कोष से प्रान्तीय सरकारों को बँधी हुई रकम वह इन सड़कों के उद्धारार्थ दिया करे, साथ ही सड़कों के विकास के लिये निम्नलिखित सुझाव भी उपस्थित किये गये:—

(१) एक सड़क यातायात प्रवर्द्धन समिति की अलग से स्थापना केन्द्रीय सरकार करे ।

(२) एक यातायात सलाहकार समिति बनायी जाय जिसमें केन्द्रीय और प्रान्तीय दोनों सरकारों के प्रतिनिधि रखे जायँ ।

(३) सड़क यातायात के उन्नयन के लिए एक केन्द्रीय सूचना एवं अनुसन्धान विभाग की स्थापना की जाय।

इन सुन्दर सुझावों का परिणाम बहुत वर्षों बाद फलवान हुआ। एक केन्द्रीय सड़क संगठन (Central Road organisation) की स्थापना सरकार की ओर से सन् १९३० में की गयी तथा सन् १९३५ में यातायात सलाहकार समिति की स्थापना भी की गयी। इस समिति की स्थापना विभिन्न टेकनीकल तथ्यों पर विचार-विनिमय के लिए हुई। सन् १९२९ में जयकर-समिति के सुझाव पर केन्द्रीय सड़क-कोष (Central Road fund) की स्थापना की गयी।

यहीं से भारतवर्ष की सड़कों के विकास की दिशा में अभिनव परिच्छेद जुटता है। यह कोष केन्द्रीय सरकार द्वारा केन्द्रीय विधान सभा की स्थायी समिति (Standing Committee) की सलाह के अनुसार चलाया जाता था। इस कोष का छठाँ हिस्सा केन्द्र के शासन के अन्तर्गत सुरक्षित रखा जाता था जो अनुसन्धान के लिए किसी विशेष सड़क की मरम्मत आदि व्यय के लिए जिसका महत्व अखिल भारतीय हो, व्यय किया जाता था।

शेष विभिन्न राज्यों एवं प्रान्तों में उनके व्यय एवं आवश्यकता को ध्यान में रखकर वितरित कर दिया जाता था। कभी-कभी किसी सड़क की मरम्मत के लिये बड़ी रकमें भी एक मुश्त अनुदान के रूप में केन्द्रीय सरकार द्वारा इस कोष से दी जाती थी।

इस प्रकार सन् १९१९ से ही प्रान्तीय सरकारों के हाथ सड़कों का भाग्य आ गया था। केन्द्रीय सरकार केवल उपरयुक्त कोष से अनुदान देने का कार्य करती थी। पर १ अप्रैल सन् १९४७ से सरकार उन सभी सड़कों के निर्माण कराने में सभी व्यय भार अपने ऊपर लेने के लिए तत्पर हुई है जो सड़कें 'हाई वे' के अन्तर्गत आती हैं। 'हाई वे' शब्द इतना परिव्यापक हो गया कि इसका उपयोग भारत के संविधान में भी किया गया है। 'हाई-वे' का तात्पर्य उन पथों से है जिन्हें सरकार ने राष्ट्रीय पथ माना है जिनमें अन्तरप्रान्तीय सड़कें आती हैं। प्रान्तीय 'हाई-वे' जो जिलों को एक दूसरे से मिलाते हैं उनका प्रबन्धन प्रान्तीय

सरकार के अन्तर्गत होता है । प्रान्तीय सरकारों ने अपने यहां पी० डब्लू० डी० विभागों की स्थापना की है । उसी विभाग के अन्तर्गत इनका नियमन तथा सम्बर्द्धन होता है । पी० डब्लू० डी० अंग्रेजी के (Public works Depatr-mant) का रूपान्तर है पर इस विभाग का संक्षिप्त नाम पी० डब्लू० डी० ही आज अधिक परिचित तथा प्रचारित है । यह भाग प्रान्तीय सरकार के विभागीय सड़कों की देख-रेख, मरम्मत तथा विकास का कार्य करता है ।

स्थानीय संस्थाओं (म्युनिस्पल बोर्ड, डिस्टिक्ट बोर्ड, और कारपोरेशन) के प्रबन्ध में भी स्थानीय सड़कें होती हैं । नगर की कुछ सड़कों का प्रबन्ध म्युनिस्पल बोर्ड करती हैं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय महत्व के सड़कों का प्रबन्ध डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के हाथ में रहता है । इनका पब्लिक वर्क्स विभाग उनके उन्नति, रक्षा एवं उनके लिए प्रगति का कार्य करता है ।

दिसम्बर सन् १९४३ में भारतीय सड़क-कांग्रेस (Indion Road Congress) के अवसर पर जो नागपुर में हुई थी, भारत की केन्द्रीय सरकार ने प्रधान इंजीनियरों का एक सम्मेलन बुलाया था । यह अधिवेशन भारत की सड़कों के नव-निर्माण के लिए हुए प्रयत्नों के इतिहास में अपना शानी नहीं रखता । इस अधिवेशन में भारत की सड़कों के उन्नयन के लिए गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श किया गया और उनके अभ्युदय के लिए एक दस वर्षीय योजना बनायी गयी जिसे नागपुर-योजना के नाम से लोग पुकारते हैं । भारत में तब तक के किये गये प्रयत्नों में यह सर्वाधिक सबल प्रयत्न था सड़कों के नव-निर्माण के लिये ।

भारत की सड़कों को इस योजना के अन्तर्गत निम्नलिखित पाँच विभागों में विभक्त किया गया ।

(१) राष्ट्रीय राज-पथ ।
(२) प्रान्तीय या राजकीय राजपथ ।
(३) प्रमुख जनपदीय पथ ।
(४) स्थानीय पथ ।
(४) ग्राम-पथ ।

राष्ट्रीय राजपथ के अन्तर्गत वे महत्वपूर्ण सड़कें आती हैं, जो राज्य सरकार की राजधानियों को केन्द्र की राजधानी दिल्ली से जोड़ती हैं, जो बन्दरगाहों से से देश के भीतरी भागों से सम्पर्क स्थापित करती हैं, और जो सामरिक दृष्टि से देश के लिए अत्यन्त महत्व रखती हैं।

प्रान्तीय राजपथ की सीमा में उन सड़कों का वर्गीकरण किया गया है जो सड़कें उस प्रान्त, राज्य या प्रदेश की प्रमुख सड़कें हैं। प्रायः सभी राज्यों की ट्रंक सड़कें इस की परिधि में आती हैं।

प्रमुख जनपदीय पथ के अन्तर्गत वे उप सड़कें या प्रमुख सड़कें आती हैं जो रेलवे स्टेशन, बड़ी सड़कों से उस जनपद के उद्योग, व्यापार एवं सामाजिक मनोभावों के परिवाहन का कार्य करती हैं। इन सड़कों का प्रबन्धन तथा नियमन स्थानीय संस्थाओं के अन्तर्गत आता है। ये सड़कें अपने जनपद का सम्पर्क निकटस्थ जनपद से करानेवाली होती हैं।

स्थानीय पथ और ग्राम-पथ जनपद के अन्तर्गत विभिन्न ग्रामीण वासियों एवं बाजारों को एक दूसरे के सम्पर्क में लाते हैं। इनका प्रबन्धन तथा नियमन भी स्थानीय संस्थाओं यथा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, म्युनिस्पल बोर्ड, कारपोरेशन तथा नोटीफाइड एरिया के प्रबन्धक के अन्तर्गत ये आता हैं।

यह योजना युद्ध समाप्ति के बाद बीस वर्ष के अवधि की थी। इस योजना के अन्तर्गत ४००,००० मील 'हाई वे' निर्माण की बात समाहित की गयी है। व्यय की दृष्टि से इस योजना में अतुल धनराशि व्यय करने का विधान प्रस्तुत किया गया है। बीस वर्षों के इस निर्माण कार्य में ४५० करोड़ रुपये व्यय का अनुमान किया गया है।

नागपुर की इस योजना के अनुसार केन्द्रीय सरकार के सामने यह सुझाव उपस्थित किया गया था कि केन्द्रीय सरकार को सुरक्षा, घिसावट एवं नव-निर्माण का आर्थिक भार ग्रहण करना चाहिए। लेकिन यह आर्थिक भार वहन केवल राष्ट्रीय राज-पथों (National High-way) के लिए केन्द्रीय सरकार का होगा। साथ ही इस योजना के परिसंचालन के लिये एक बोर्ड का सुझाव भी रखा गया था जो सर्वथा निष्पक्ष होना चाहिये जिसकी देख-रेख में प्रतुत योजना चलायी जायेगी।

इन सुझावों के फलस्वरूप केन्द्रीय सरकार ने उन सभी सड़कों के निर्माण तथा उत्थान का भार अपने ऊपर ले लिया जो राष्ट्रीय राज-पथ (National High ways) के अन्तर्गत आती हैं।

यह नागपुर वाली राष्ट्रीय राजपथ वाली योजना अपने भीतर प्रायः सभी वर्तमान ट्रंक सड़कों को समेटे है और जिसके अंतर्गत सभी सड़कों का सतह दुरुस्त है। राष्ट्रीय राजपथ के अन्तर्गत १३,३०० मील लंबी सड़कें आती हैं जिसमें लगभग २४०० मील देवली रियासतों के भीतर थीं।

भारतीय पथ कांग्रेस

सन् १९३४ में भारत सरकार ने एक अर्ध सरकारी संगठन सड़कों के उत्थान के लिये भारतीय पथ कांग्रेस (Indian Road cangress) के नाम से किया। इसके सदस्य योग्यता प्राप्त सड़कों के इंजीनियर हो सकते हैं। इसके अन्तर्गत इसके सदस्य आपस में अपने अनुसंधान, प्रयोग एवं अनुभव तथा कठिनाइयों पर जो पथ से सम्बन्धित हैं अपने विचार प्रगट करके तथा इसके द्वारा एक मंच की स्थापना होती है जिस पर इस कार्य में लगे शिल्पी अपनी व्यवस्था सड़क सम्बन्धी सभी विषय संगठन से लेकर शासन तक पर देते हैं। १९३४ में इनकी सदस्य संख्या ७४ थी और वर्त्तमान समय में इनकी संख्या १२५० है। इनकी सबसे बड़ी देन अध्ययन प्रस्तुत करने के अतिरिक्त इन्होंने सड़क व पुलों के लिये भारत में एक विशेष सर्वमान्य कोड का निर्माण किया। जब राजपथ के बड़े-बड़े इंजीनियर सड़कों के निर्माण में संलग्न होने को प्रस्तुत हुए उसी समय हमारे देश में दुर्भाग्य की भयंकर आँधी आई और स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही साथ भारतवर्ष विभाजित कर दिया गया। जिसका परिणाम यह हुआ कि निर्माण में जुटे इंजीनियरों का यह कार्य, सामान, आदि के अभाव में अव्यवस्थित हो गये। निर्माण की इस प्रगति को एक धक्का इस बात से भी लगा कि भारत सरकार की आर्थिक स्थिति भी उतनी आशावान नहीं रही जितनी योजना के बनाते समय कल्पना की गई थी। इस आर्थिक अड़चन के कारण निर्माण की यह प्रगति रुक गई। इसका परिणाम यह हुआ कि १९४७ के बाद गत ६ वर्षों में नागपुर योजना का सतांश भी पूरा न किया जा सका। जब कि निर्धारित अवधि का एक चौथाई

समय व्यतीत हो चुका है। इससे निराशा की भावना बढ़ना स्वाभाविक ही है।

सड़क यातायात--

भारतवर्ष में भी सड़क यातायात मोटरों का स्थान दिनोत्तर महत्वपूर्ण होता जा रहा है। और बड़ी द्रुत गति से आवागमन के पुराने साधनों के स्थान पर इनका उपयोग हो रहा है। भारतवर्ष में इन मोटरों के कर का विषय राज्यों राज्यों से सम्बन्धित है। राज्य-राज्य के करों में विभिन्नता है। इन राज्य-करों के अतिरिक्त बम्बई और मध्य प्रदेश की सरकारें अतिरिक्त कर इनपर लगाती हैं और उसे (Wheel Tax) (ह्विलकर) के नाम से सम्बोधित करती हैं। केन्द्रीय सरकार इन मोटर-गाड़ियों पर परोक्ष रूप से कर लगाती हैं। यह कर (aTx) मोटर गाड़ियों और उनके हिस्सों पर आयात कर, निर्यात कर और चुङ्गी के रूप में लगाया जाता है। इसके ईंधन पेट्रोल पर भी उपरयुक्त कर तो लगाये ही जाते हैं साथ ही राज्य की सरकारें बिक्री कर भी (Soles Tax) भी लगाती हैं। टायर भी इसके अपवाद नहीं हैं।

१९३७ के मोटरगाड़ी विधान के अनुसार प्रत्येक राज्य कई क्षेत्रों में बाँट दिये गये हैं। हर एक क्षेत्र में क्षेत्रिय यातायात का कार्यालय होता है जो अपने क्षेत्र की तत्सम्बन्धी व्यवस्था करता है। राज्यों में राजकीय यातायात कार्यालय होता है जो क्षेत्रीय कार्यालयों को संचालित करता रहता है। भारतवर्ष में १९३७ के विधान के अनुसार प्रत्येक मोटर का बीमा करना अनिवार्य है।

सरकारी संगठन--

भारत की सरकार ने अपने सलाहकार इंजीनियर की देखरेख में केन्द्रीय सड़क संगठन (Central Road Organisation) स्थापित किया है जो केवल राष्ट्रीय राज्य पथों तक ही नहीं बल्कि जो बड़ी-बड़ी समस्यायें सामान्यतः सड़कों के सम्बन्ध में आती हैं राज्य की सरकारों के लिये अनुदान राष्ट्रीय राज्य-पथों के अतिरिक्त अन्य सड़कों की उन्नति, सड़क सम्बन्धी अनुसंधान, सड़क सम्बन्धी आंकड़े, विदेशों में भारतीयों का प्रशिक्षण, सड़कों के लिये मशीनों की व्यवस्था आदि का प्रबन्ध इसके अन्तर्गत है।

इसके अतिरिक्त सरकार ने ओखला में जो दिल्ली और आगरा सड़क पर पड़ता है केन्द्रीय पथ अनुसंधानशाला नामक एक संस्था की स्थापना की है जिसमें वैज्ञानिक औद्योगिक अनुसंधान समिति के अन्तर्गत सड़क सम्बन्धी अनुसंधान पर मनन और चिन्तन किया जाता है। तथा उसका उपयोग राष्ट्रीय हित के लिये किया जाता है।

राष्ट्रीयकरण--

सिद्धान्त रूप में प्रायः भारत के सभी राज्यों में सवारी की मोटरों का राष्ट्रीय करण आधार भूत नीति के रूप में स्वीकार कर लिया है और उस दिशा में अत्यन्त द्रुतगति के साथ अग्रसर भी हो रहे हैं। कुछ राज्य की सरकारें तो इस स्थिति में पहुँच गई हैं कि प्रायः सभी निजी सवारी यातायात का वे राष्ट्रीयकरण कर चुकी हैं। राष्ट्रीयकरण की यहक्रिया सभी राज्यों में विभिन्न रूपों में चल रही हैं। बम्बई और मध्य प्रदेश में राष्ट्रीयकरण कृत सेवाएँ कारपोरेशन द्वारा जो (Quripudtie carporation) अर्ध सरकारी कारपोरेशन के नाम से विख्यात है।) संचालित होती है। पंजाब उत्तर प्रदेश और मद्रास में सरकारी विभाग द्वारा इनका नियमन संचालन तथा प्रबन्ध होता है। पर मद्रास में मुफ्-सिल रास्तों के लिये यह व्यवस्था नहीं है। उड़ीसा में पाँच क्षेत्रों से तीन क्षेत्रों में राष्ट्रीय यातायात की व्यवस्था है और शेष में निजी। पश्चिमी बंगाल केवल कलकत्ते में सरकारी बसों की व्यवस्था है। दिल्ली में यह व्यवस्था केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत है। दिल्ली पथ यातायात (Delhi road Tronpost) द्वारा होता है।

रेल और सड़कें--

इस बात का निरंतर प्रयत्न किया गया है कि रेल और सड़क में सम्पर्क स्थापित किया जाय। ताकि बहुत से अपदयों से राष्ट्र की जो आर्थिक क्षति होती है उससे बचत होती है तथा आवश्यकतानुसार रेल और सड़क का उत्थान इस क्षेत्र से बचत होती है तथा आवश्यकतानुसार रेल और सड़क का उत्थान इस ढंग से किया जाता है कि राष्ट्र को अधिक से अधिक इस सम्बन्ध में सुविधा दी जाय। भारत-वर्ष में अराष्ट्रीय सरकार होने के कारण उसका ध्यान तो अपने स्वार्थ में सीमित

था जन-कल्याण या जनमंगल की भावना सम्बन्धी जो कार्य उस सरकार द्वारा किये गये वह भी केवल इस कारण से कि उसके द्वारा भारत की जनता को यह दिखाकर कि सरकार जनता की बहुत सेवायें कर रही है मूर्ख बनाने के लिये राष्ट्रीय करण तो पहले ही हो चुका था अब आवश्यकता इस बात की है कि चिरवांछित उद्देश्य की प्राप्ति के लिये सड़क के परिवाहनों का भी राष्ट्रीयकरण कर दिया जाय इस दिशा में निम्नांकित प्रयत्न किये गये हैं।

१—मद्रास नगर की पूरी मोटर सवारी यातायात का राष्ट्रीयकरण किया जा चुका है।

२—बम्बई प्रथम राज्य है जिसमें कि राज्य यातायात कारपोरेशन की स्थापना की है जिसके द्वारा सस्ते से सस्ते दर में सुव्यवस्थित मोटर यातायात की व्यवस्था की जा सके। इस योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय व प्रान्तीय दोनों सरकारों का योगदान है। पश्चिमी बंगाल की सरकार ने यातायात संचालक मण्डल की स्थापना की है जिसका उद्देश्य रेलों और सड़कों का सुव्यवस्थित उत्थान करना तथा सवारी गाड़ियों का भी राष्ट्रीयकरण करना है।

४—उत्तर प्रदेश की सरकार ने सरकारी परिवाहन विभाग का संगठन किया है जिसके अन्तर्गत आवश्यकतानुसार मोटरें विभिन्न सड़कों पर दौड़ाई जा रही हैं।

५—पंजाब में भी राज्य की ओर से विभिन्न ग्रामीण एवं नागरिक क्षेत्रों म मोटरें चलाई जाती हैं।

६—हिमांचल प्रदेश की सरकार ने पूरे राज्य भर में सवारी यातायात का राष्ट्रीयकरण कर दिया है।

७—दिल्ली में सरकारी बसें चल रही हैं। जो ग्वालियर और उत्तरी भारत यातायात कम्पनी से लेकर चलाई जा रही हैं। पहले उक्त कम्पनी की बसें चला करती थीं।

भारत में सड़कों का महत्व

इतने विशालतम देश में जो एक महाद्वीप की भांति है, रेलों की महत्ता आवागमन के साधन के रूप में निर्विवाद रूप से अप्रतिम है। यातायात के इस साधन

की अभिवृद्धि से न केवल भारत का सामाजिक एवं सांस्कृतिक उन्नयन होगा अपितु गरीबों का देश भारत आर्थिक अभ्युदय की ओर भी अग्रसर होगा। देश की सुरक्षा में आज की स्थिति में इनका महत्व अत्यन्त गुरुतर है। शान्ति-स्थापन के कार्यों में भी सड़कें परिवाहन के रूप में अप्रतिम योग-दान करने में सहायक सिद्ध होती रही हैं।

भारत की गरीबी की तह में जाने पर यह तथ्य सर्वथा स्पष्ट हो उठता है कि उसका मूल कारण यह है कि यहाँ के उद्योग पनप नहीं पा रहे हैं। यद्यपि भारत में उत्पादन करने के सभी सामान्य-साधन उपलब्ध हैं तो भी यह उतनी प्रगति नहीं कर पा रहा है, जितनी प्रगति इससे न्यून साधन-सम्पन्न देश करते चले जा रहे हैं। आज भारत का कृषि-उद्योग प्राचीन लीक पर चल रहा है। हमारे खेतों में उतना उत्पादन नहीं होता जितना अन्य देश के खेतों में। उर्वरा-शक्ति की कमी तो है ही साथ ही जो कुछ उत्पन्न होता है उसके लिए बिक्री के सुन्दर साधन उपलब्ध नहीं हैं। जिससे ९० प्रतिशत ग्रामों में रहनेवाली गरीब जनता अपने श्रम का वह मूल्य भी नहीं पा सकती जो उसे उपलब्ध हो सकता है। यहाँ के उद्योग धन्धों के सम्बन्ध में भी वही बात दुहरायी जा सकती है। पर जो कुछ भी प्रगति दीख रही है उसके लिए निश्चय ही इन सड़कों को श्रेय देना पड़ता है क्योंकि उन्होंने इन विषम परिस्थिति में परिवाहन के साधन के रूप में उत्पादन की महत्ता को बढ़ाया है। और निरन्तर देश के एक कोने का उद्योग दूसरे कोने तक पहुँचाने में नगरों एवं ग्रामों के सम्पर्क स्थापन करने में इन सड़कों की लम्बाई को संकुचित करनेवाली मोटरों का अत्यन्त महत्वपूर्ण योग-दान है। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि अभी देश के भीतर इतनी सड़कें बन गयी हैं या बन रही हैं। जो सुदूर ग्रामों को नगर से पूर्ण रूप से सम्बद्ध कर विकास के नये परिच्छेद का श्रीगणेश करें। यही मूल कारण है कि हम आज भी औद्योगिक प्रगति में पीछे हैं। आधुनिक युग के साथ चलना तो दूर रहा आज भारत में अनेक ऐसे क्षेत्र भी पड़े हैं जहाँ के निवासी आज के युग से परिचित भी नहीं हैं।

देश में जो सड़कें हैं वे भी संतुलित नहीं, उनका असंतुलन प्रगति के पथ पर दीवार बन कर खड़ा हो गया है। हमारे देश का दुर्भाग्य है कि गाँवों के क्षेत्रों को जोड़ने के लिए नगरों तक तो सड़कें रद्दी और कम हैं किन्तु नगरों को जोड़ने के लिये लम्बी-लम्बी सुन्दर सड़कों की मात्रा अधिक है। होना तो यह चाहिए था कि ग्राम और नगरों से सम्पर्क स्थापनार्थ सड़कों की संख्या अधिक होनी चाहिए थी पर अपने देश में इसका उलटा ही हुआ। गाँव और जिले की सड़कों की अपेक्षा ट्रंक सड़कों का निर्माण अपने देश में अधिक व्यवस्थित ढंग से हुआ। आवश्यकता नहीं स्वार्थ का प्रतिफल था, इन सड़कों का विकास। क्योंकि कल तक जो हमारे शासक थे उनको देश के उत्थान से उतनी ममता नहीं थी जितनी ममता उन्हें इस बात से थी कि वे अपनी सत्ता इस देश पर बनाये रखें क्योंकि दूसरे देश से आकर शासन करनेवालों को अपने देश के आर्थिक कल्याण का अधिक ध्यान रखना ही पड़ता है। बड़ी-बड़ी लम्बी सड़कें तो इस रूप में सत्ता बनाये रखने में उनके लिये इस कारण अधिक उपयोगी थीं कि विद्रोह आदि होने पर उसे दबाने में, अन्यत्र से सहायता मँगाने में लम्बी सड़कें अपेक्षाकृत लाभप्रद होती हैं।

जल यातायात

महत्ता

आज कोई भी राष्ट्र विश्व के अन्य देशों से सम्बन्ध बनाये बिना औद्योगिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में उन्नतिशील नहीं हो सकता। प्रायः देशों के मध्य विशाल सागर की उत्ताल तरंगें देशों को मिलने से दूर रखती हैं। जब से भाप द्वारा चालित जलयानों का निर्माण हुआ तब से यह दूरी कम हुई और सभी दृष्टियों से आज मानव विश्व मानवतावाद की ओर अग्रसर हो रहा है। संसार के सभी देश आज अपने को पूर्ण आत्म निर्भर नहीं बना पाये हैं। उन्हें एक दूसरे के ऊपर निर्भर होना पड़ता है उसमें ये जलयान सहायक होते हैं। और कहना न होगा कि विश्व से जितने सामानों का आयात व निर्यात होता है उनमें से अधिकांश इसी के द्वारा होता है। माल ढोने की दृष्टि से अभी तक मानव ने जितने भी आवागमन के साधनों का निर्माण किया है उनमें सर्वाधिक वजनी बोझ यही ढो पाते हैं। देशों के व्यापारिक माल को उन स्थानों में पहुँचा कर जहां कि उनकी आवश्यकता है निर्यात करने वाले राष्ट्र को सम्पन्न बनाते हैं; संसार के बहुत बड़े उद्योगों में से एक होने के कारण बहुत से लोग इनसे रोजी कमाते हैं। साथ ही इनके किराये के द्वारा जो आय होती है उससे राष्ट्र सम्पन्न होता है। युद्ध के समय सामरिक दृष्टि से ये बड़े काम के प्रमाणित हुए हैं। अतीत में ब्रिटेन, हालैण्ड और फ्रांस के साम्राज्य के स्थापित होने में इनका योग दान अप्रतिम रहा है। अन्ताराष्ट्रीय देशों के भीतर सम्पर्क स्थापित कर उन्होंने बहुत से शासकों के लिये व्यापारिक बाजार का अच्छा निर्माण किया। कभी-कभी युद्ध के समय

ये शत्रुराष्ट्र के द्वारा डुबा दिये जाते हैं। कभी-कभी असावधानी से ये समुद्र में डूब जाते हैं जिससे बहुत से जानमाल की हानि होती है। फिर भी इनकी महत्ता के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि यदि ये आज न होते तो कितना ही बुद्धिका प्रयोग किया जाता आज की वैज्ञानिक सफलता न मिलती। संसार के सर्व-सम्पन्न होने पर इंग्लैण्ड के सफल होने का कारण यह भी था कि १६१४ तक संसार में उसके मुकाबिले समुद्री बेड़ा किसी का भी न था। द्वितीय युद्ध में तो अपनी अभूतपूर्व लीला पनडुब्बियों द्वारा दिखायी गयी। इनकी आवश्यकता आज विश्व में सर्वत्र अनुभव की जा रही है।

जलयान

बिना पानी पर यात्रा किये संसार के देशों से सम्पर्क बनाये रखना असम्भव है। प्राचीन काल में यह यात्रायें बहते हुए लकड़ी के लट्ठों आदि से होती थीं। धीरे धीरे व्यापारी लोग अपना माल भी ले जाने लगे और इसके लिए उन्होंने
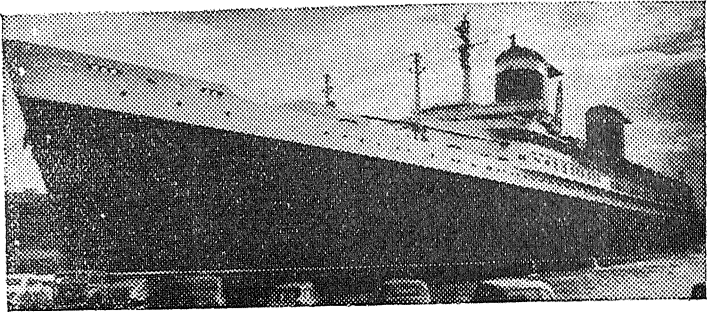
दो आधुनिक तम जलयान

नावें बनाईं, जिनमें उन्होंने पाल (Sails) का भी प्रयोग किया जिससे हवा की शक्ति का सहारा मिल गया, किन्तु इनके द्वारा यात्रा तभी सम्भव थी जब हवा इच्छानुसार रुख पर चल रही हो। धीरे-धीरे भाप की शक्ति का ज्ञान हुआ और भाप के इंजिन से नावें चलाने का कार्य भी प्रारम्भ किया गया।

सर्वप्रथम राबर्ट फुल्टन (Robertfulton) नामक एक अमेरिकन ने १८०७ ई० में भाप से चलने वाला जहाज बनाया और उसने इसे Hudson नदी में हवा के विरुद्ध चलाया। अंगरेज लोग संसार में कुशल नाविक समझे जाते हैं और कदाचित जलशक्ति है भी उन्हीं की सबसे अधिक। इसी कला के द्वारा उन्होंने विभिन्न देशों में अपना व्यापार भी फैलाया है। सर्वप्रथम यह जहाज लकड़ी के बनाये जाते थे, किन्तु अब लोहे और इस्पात के बनाये जाने लगे हैं। वैज्ञानिकों ने इस दिशा में इतनी अधिक उन्नति की है कि न केवल जल के ऊपर चलने वाले जहाज ही बनाये हैं बल्कि जल के नीचे चलने वाले पनडुब्बी जहाजों का निर्माण भी किया है। यह जलयान बहुत लम्बे होते हैं।

जलयान प्रायः लोहे के बने होते हैं। किन्तु लोहा तो भारी होने के कारण पानी में डूब जाता है फिर भी यह जहाज क्यों नहीं डूबते '? इसका कारण यह है कि जब कोई ठोस पदार्थ किसी द्रव में डाला जाता है तो उस पर दो शक्तियां काम करती हैं १—पृथ्वी की आकर्षण शक्ति २—द्रव की उछाल। जब पृथ्वी की आकर्षण शक्ति अधिक होती है तो वह पदार्थ डूब जाता है और जब
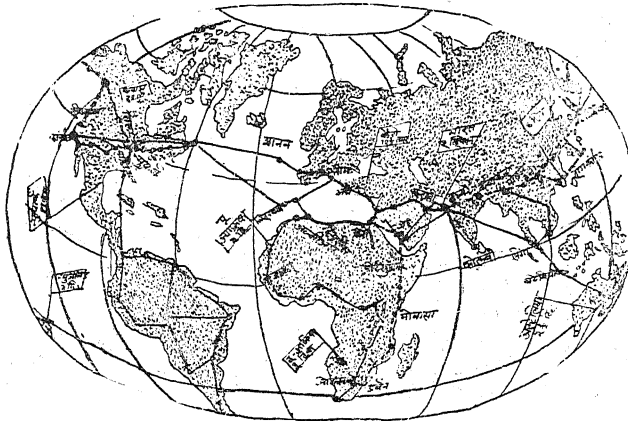
विश्व का जलपथ

द्रव की उछाल अधिक होती है तब वह पदार्थ तैरता है और जब दोनों शक्तियाँ बराबर होती हैं तब वह पदार्थ द्रव के समतल पर रहता है। इस सिद्धान्त को सर्वप्रथम आर्किमिडीजने बताया था। उन्होंने कहा था कि "जब कोई ठोस पदार्थ किसी द्रव में पूरा या उसका कुछ भाग डाला जाता है तब उसके भार में कमी आ जाती है जो ठोस द्वारा हटाये गये द्रव के भार के बराबर होती है।" इसीलिए जहाज का लगभग आधा भाग जल में डूबा रहता है यह भाग जहाज के भार के बराबर पानी को हटा देता है। जिससे वह यहीं रुक जाता है और तैरता रहता है। प्रत्येक जलयान पर (Plinsallines) बनी रहती हैं जिसका मतलब यह होता है कि जहाज को पानी में इस लाइन से नीचे ही रखना चाहिये अन्यथा जहाज के डूब जाने का भय है। यह लाइन जलयान की (Capacity) समावेशन शक्ति के आधारपर बनाई जाती है। इसीलिए जब जहाजों को खाली जाना पड़ता है तब भी वे इस लाइन तक जहाज को डुबाने के लिए रेता आदि भर लेते हैं। और यह भी ध्यान रहे कि इस लाइन से पानी ऊँचा भी न हो जाये इसीलिए Load अधिक भी नहीं करते। इसी '(Capacity)' समा-

जलयान
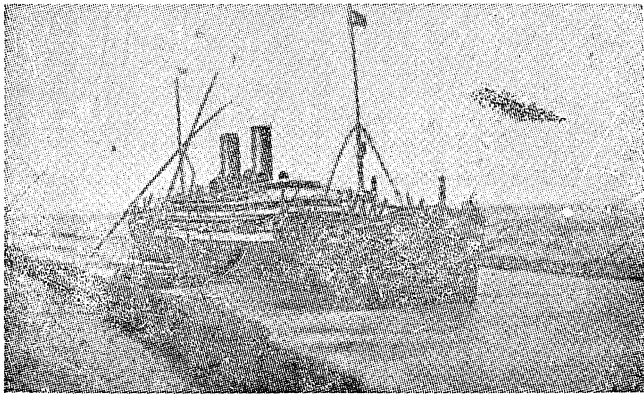
वेशन शक्ति, जो उसके द्रव हटाने की मात्रा पर निर्भर है, को Tonhage कहते हैं।

जलयान दो प्रकार के होते हैं—एक तो वे जो पानी के तल पर चलते हैं, जिन्हें साधारण जलयान या Steamship कहते हैं और दूसरे वे जो पानी के नीचे भी चलते हैं इन्हें पनडुब्बी या Submarine कहते हैं। इनमें कई-कई पानीकी टंकियां बनी होती हैं। जिनके द्वारा अपने यह भारको कम या अधिक करके पानी के नीचे या ऊपर कर सकती हैं।
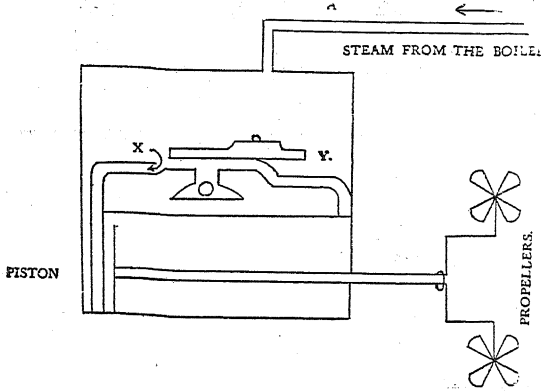
Steamship के चलनेका तरीका बिल्कुल Railway Engine के समान है। अन्तर केवल इतना ही है कि Raywheel Engine का Flywheel पटरी पर चलता है और इसका जिसके चारों ओर लोहे के पंखे लगे रहते हैं पानी में। Flywheel के चलने पर ये पानीको पीछे फेंक कर जहाज को आगे बढ़ाते हैं। जहाज के अगले भाग में दाहिनी तथा बाईं ओर एक समतल लोहे की छड़ में दो पहिये लगे रहते हैं, जो छड़ के घूमने पर, जो कि पिस्टन से सम्बद्ध होती है, घूम कर पानी को पीछ की ओर फेंकते हैं। पिस्टन के चलने का तरीका नीचे दिये गये चित्र द्वारा स्पष्ट हो जायगा।

भट्टी की आग और उसके ऊपर की टंकी से बनी हुई भाप A नली के द्वारा Cylinder में जाती है। इसके जाने के x और y दो रास्ते हैं चिन्हें Velve कहते हैं। यह इस प्रकार बने होते हैं कि जब एक खुलता है तो दूसरा बन्द हो जाता है और जब दूसरा खुलता है तो पहला बन्द हो जाता है। जब भाप velve से Cylinder में घुसती है तो उसकी शक्ति से पिस्टन आगे बढ़ता है और जब वह दूसरे किनारे पर पहुँच जाता है तो x velve बन्द हो जाता है और y velve खुल जाता है और भाप आकर Piston को फिर धकेलती है। इसी प्रकार पिस्टन चलता रहता है और इसमें जुड़ा हुआ Rod भी आगे पीछे होने लगता है। इसी Rod से Shalf जुड़ा होता है जिसमें Propellers लगे रहते हैं। Rod के आगे पीछे होने से यह Shalf घूमता है और Propellers तेजी से चक्कर लगाते हैं जिससे पानी तेजी के साथ पीछे को हटता है और जहाज आगे बढ़ने लगता है। इसी क्रिया की तेजी और मन्दी पर
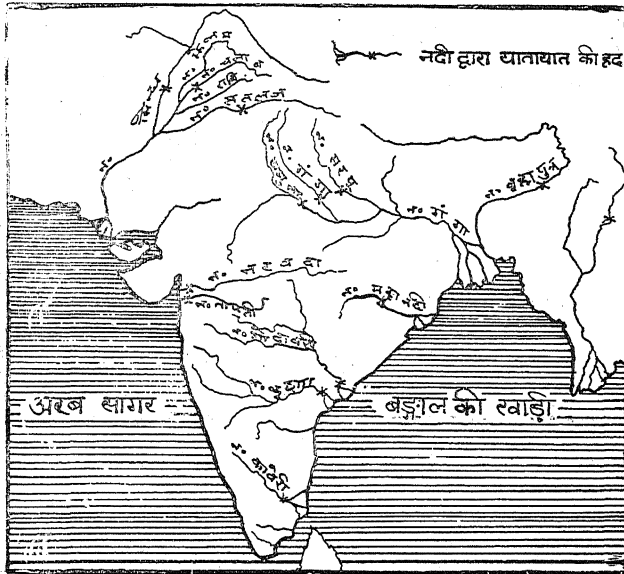
जलयान की गति निर्भर है जितनी तेजी से यह क्रिया होती है उतनी ही तेज जलयान चलता है ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारतवर्ष में भी जलयान निर्माण का कार्य प्रारम्भ हो गया है । 'जलऊषा', देहली' आदि बड़े-बड़े जलयान भारत ही की कुशलता का नमूना है । १४ मार्च १९४८ ई० को भारत का प्रथम जलयान 'जलऊषा' भारत में निर्मित प्रथम जलयान है । जलयान बनाने की सबसे बड़ी कम्पनी भारतवर्ष के विजिगापट्टम नगर में सिंधिया स्टीम नेविगेशन कम्पनी है । आशा है भारतवासी इस क्षेत्र में शीघ्र ही यथेष्ट उन्नति कर सकेंगे ।

लाभ

१. जल पर यात्रा करना थल ही के समान सुरक्षित और सरल हो गया है । जिससे देशों का व्यापार अधिक उन्नति कर रहा है ।

२. युद्ध के दिनों में सेना का आना-जाना, सामान का इधर-उधर पहुँचाना अत्यन्त सरल हो गया है ।

३. भाप के इंजिन के आविष्कार से समुद्र यात्रा अत्यन्त सुगम हो गई। इसीलिए अनेकों यात्रायें करके नये-नये उपनिवेश आदि भी ढूंढ़े जा सके ।

४. पनडुब्बी जहाज के द्वारा सागर के तल में पैठ कर बहुमूल्य रत्न आदि भी निकाले जाते हैं ।

हमारे देश में समुद्री यातायात का प्रयोग बहुत प्राचीन काल से है । मौर्य-युग में ही हमारे जलपोत वाले (जावा सुमात्रा) द्वीप तक व्यापार किया करते थे । अंग्रेजों के आने के समय तक बहुत बड़े बड़े जलपोत तैयार किये जाते थे । १८८० में भारत के गवर्नर जनरल का विवरण यह बतलाया है कि उस समय कल-कत्ते के बन्दरगाह में १०००० टन के भारतीय जहाज व्यापार आदि किया करते थे । सर विलियम डिग्वी ने लिखा था कि भारतीय सागौन के बने हुए बड़े जलपोत इंग्लैण्ड के ओक वृक्ष के बने हुए जहाजों से कहीं अच्छे थे ।

हमारे देश में ३२०० मील लम्बा तट है और हमें इस तट का व्यापार अपने ी जहाजों द्वारा करना अतः इस उद्योग को ब ाने की आवश्यकता है । हमारे

देश के ये तट समतल से हैं और किनारा छिछला होने तथा कटे-कुटे न होने से अच्छे बन्दरगाह नहीं हैं फिर भी पर्याप्त उन्नति की जा सकती है और इसीलिए राष्ट्रीय सरकार ने इस ओर बहुत अधिक ध्यान दिया है ।

जल-यातायात

अत्यन्त प्राचीन काल से ही उत्तर-भारत में नावों द्वारा व्यापार करने की प्रथा है । इसका कारण उत्तर भारत की नाव चलाने के उपयुक्त नदियां हैं । ये नदियाँ लगभग २६००० मील नाव चलाने के उपयुक्त हैं । इन नदियों द्वारा यातायात के पुराने साधनों का उपयोग होता था । पर जब रेलें उत्तरी भारत में प्रसारित हुईं तो इनकी उपयोगिता भी सड़कों की ही भाँति कम हुई । अतीत में भारत न केवल धरती पर अवस्थित नदियों के द्वारा परिवाहन में उन्नत था अपितु समुद्रों पर भी उसके विशाल-काय जल-पोत अन्ताराष्ट्रीय जगत में भी परिवाहन के लिये प्रसिद्ध थे ।

इसे १८८० ब्रिटिश गवरनर जनरल की लन्दन भेजी गई रिपोर्ट में भी देखा जा सकता है । उन्होंने लिखा था कि कलकत्ते में १० हजार टन के भारवाही अच्छे पोत लन्दन के लिये माल ले जाने के लिए तैयार हैं ।" "प्रौस्परस ब्रिटिश इंडिया" के लेखक विलियम डिग्वी ने अपनी उक्त पुस्तक मेंलिखा था कि टीक के बने बम्बई के जल-पोत इंगलैण्ड में बने ओक के पोतों से कहीं अच्छे थे ।

भारत में आन्तरिक जल यातायात के उपयुक्त नदियों का तीन स्त्रोत हैं जिनसे जल-यातायात के स्त्रोतों में अनेक छोटो-छोटी नदियाँ आकर मिलती हैं । भारत के विभाजन के पश्चात् उनमें से एक सिन्धु नदी का जल-मार्ग पाकिस्तान के हिस्से पड़ गया । गंगा हरद्वार से लेकर बंगाल की खाड़ी तक सम्पन्न, औद्योगिक एवं उन्नत प्रदेशों से होकर मैदान में बहती है जो नाव-यातायात की उन्नति के लिये प्रमुख साधन बनती है । ब्रह्मपुत्र के कुछ अंश में भी नाविकोकरण की सुन्दर सुविधा प्राप्त है । डिबरूगढ़ के बाद ८०० मीलों तक इसमें नाव चलायी जा सकती है ।

नाव के उपयुक्त नहरों का अभाव भारतवर्ष में है । केवल पूर्वी तथा सर-कुलर नहर, बंगाल, उड़ीसा कोट नहर, बेंकिंघम कैनाल, गैंजैज कैनाल (हरद्वार

से कानपुर तक) नहरें तथा कुछ छिटपुट नहरें जो ४३०० मील से भी कम हैं नाव चलाने के उपयुक्त हैं। भारत और पाकिस्तान मिलाकर कुल नाव के उपयुक्त धरती पर नदियों और नहरों में नाव चलाने के योग्य २५००० मील यातायात का साधन है जिनमें १०००० मील नदियों और १५००० मील नहरों में इस यातायात के साधन का सामान्य रूप से अंकन किया जाता है। लेकिन वाष्प चालित जल-यान जो आधुनिक परिवाहन के रूप में संसार में प्रयुक्त होता है, भारत की नदियों में अभी जल-यान उस मात्रा में नहीं चलते जिस मात्रा में विदेशों में। गंगा में पटना तक जल-यान आते हैं। गंगा नदी को और गहरा किया जा रहा है और इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि ये यान इलाहाबाद तक आने जाने लगें ताकि ये प्रदेश भी अपने को आधुनिक जल-यातायात से लाभान्वित कर सकें।

नदियों द्वारा परिवाहन के विकास का क्रम इस देश में इसलिए उन्नत नहीं हो सका कि यह अभी हाल तक राज्यों की अधिकार सीमा में थीं। राज्य इनकी ओर अत्यन्त उपेक्षा की दृष्टि से देखते रहे हैं। साथ ही एक ही नदी से अनेक राज्यों का सम्बन्ध होने के कारण उनकी ओर उतना ध्यान नहीं दिया जा सका जितनी आवश्यकता इसके विकास के लिए थी। फिर भी स्वतंत्र भारत के विधान के अन्तर्गत नदियों को केन्द्र का विजय मान लिया गया। फलतः उत्थान की आशा बढ़ गयी है।

इसका परिणाम यह होगा कि नदियों का विकास अत्यन्त द्रुतगति से होगा। केन्द्रीय जलशक्ति सिंचाई तथा जल वाहन कमीशन के हाथ में इनके उत्थान का कार्य सौंपा गया है। यह संस्था आधुनिक प्रयोगों और नये जल पथ के निर्माण कार्य में तल्लीन हैं। और इसी के मत्थे यह कार्य भी है।

अनेक बाँध भी देश में बँध रहे हैं। और इनके साथ ही जल-यातायात के विकास की सम्भावना भी बढ़ रही है। भारत में बहुत सी नदियों में साल भर पानी नहीं रहता, बहुत सी छिछली हैं जिसके कारण नदियों से साल भर जल-यातायात का कार्य नहीं किया जा सकता। इस कारण से भी निपटने की व्यवस्था की जा रही है।

बांध और जल यातायात

उड़ीसा में हीराकुण्ड बाँध के बँध जाने से हीराकुण्ड बाँध में भी ३०० मील तक नावें चलाई जा सकेंगी। इससे कुछ क्षेत्र के निवासियों का काफी कल्याण होगा। यह जल यातायात नदी के बहाने से समुद्र और देश के भीतरी भागों से सम्पर्क स्थापित करने में सहायक होगा। बम्बई के कोकरपारा बाँध द्वारा समुद्र के किनारे सूरत से कोकरपारा तक ५० मील नये जल-यातायात की व्यवस्था हुई है। बिहार के दामोदर बाँध के बँध जाने से रानीगंज के कोयले के प्रदेश से हुगली (कलकत्ता) का सम्पर्क जल-यातायात द्वारा स्थापित हो जायगा। जिसके द्वारा बिहार व बंगाल दोनों इस क्षेत्र में लाभान्वित होंगे। सेण्ट्रल वाटर पावर कमीशन भी गम्भीरतापूर्वक जल यातायात की समस्या पर विचार कर रहा है, और इस बात का प्रयत्न कर रहा है, कि बक्सर से इलाहाबाद तक जल यातायात की सुन्दर व्यवस्था हो जाय तथा घाघरा नदी में बहराम घाट तक भी इसी प्रकार की व्यवस्था हो सके। कमीशन इस बात के लिये भी प्रयत्नशील है कि दक्षिण व पूर्वी घाट वाले प्रदेशों को जल यादायात द्वारा एक दूसरे से सम्बन्ध कर दिया जाय। इसी प्रकार इस बात की भी सम्भावना बढ़ रही है कि आसाम से पश्चिमी बंगाल का सम्पर्क भी जल-यातायात द्वारा बनाया जाय। गंगा, बैरेज प्रोजेक्ट द्वारा इस बात का प्रयत्न होने वाला है कि भागीरथी के पास एक बाँध बनाया जाय जो बिहार, उत्तर प्रदेश और बंगाल को जल-यातायात के सूत्र में बाँध दे।

देश में अनेक बाँध इस व्यवस्था को आगे बढ़ाने के लिये बनाये जा रहे हैं या भविष्य में उनके निर्माण की योजना बनाई जा रही है। फिर भी नदियों के इस देश भारतवर्ष में जो व्यवस्था जल-यातायात की है वह किसी भी अर्थ में सुसम्पन्न नहीं मानी जा सकती। इसका अविलम्ब विकास परम अपेक्षित है। प्रसन्नता की बात है कि राष्ट्रीय सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ है, जिससे मंगलमय भविष्य की कल्पना की जा सकती है।

अन्ताराष्ट्रीय समुद्री यातायात

मासिक औसत

(हजार मेट्रिक टनों में)

बोझिल					बोझिल	
देश	१६३६	१६४६	१६५०	१६३६	१६४६	१६५०
आस्ट्रेलिया	४६७	५३४	५२०	४८०	६४०	८८६
बेलजियम	८६४	७६०	६२१	१०३१	१०८०	८६८
ब्राजिल	३४६	३१२	२६७	३६६	५६८	६७१
केनेडा	१३०५	१६६०	७१५	७८८	२१३८	१५७६
सीलोन	५२१	५०६	५२८	११२	१५६	१५३
चील	३४२	४०२	३४७	१०३	१०६	१२२
डेन्मार्क	१५६	१३६	१५२	६२०	८५४	६६१
फ्रांस		१२३४	१४८७		२६६६	२५१६
देश पश्चिमी	१६३६	१६४६	१६५०	१६३६	१६४६	१६५०
जर्मनी	८२६	४४२	७७६	१८४२	१२६३	१०१८
इंडोनेशिया	१००६	६३७	६६०	१७२	२५३	२०६
जापान	१४८७	२०२	२६२	२८६८	६५१	६६५
नेदरलैण्ड	१२८२	८६२	१२०४	२२७६	१५५५	१८३०
न्यूजीलैण्ड	८१	८७	१६७	२१५	२६२	२६७
पोलैण्ड	१२७३	११७१		२३१	२३८	
स्पेन		३३५	३२५		३८४	४६१
यूनियन आफ साउथ						
अफ्रीका	२५२	२५६	२७६	३६६	५३६	४२६
यूनाइटेट स्टेट	४६६४	५४३३	४३८१	३१७६	५८१६	७०४७

व्यापारी जलयानों का निर्माण

(१०० ग्रास टन से अधिक)

देश	१९३९	१९४९	१९५०
विश्व	२७४३	४३९५	४८३९
बेलजियम	१६५	६५९	७४६
ब्रिटिश	२२१	८०८	१०७७
डेनमार्क	१३१	१३२	१३६
फ्रान्स	९७	४२२	४५४
जर्मनी			७७३
इटली	२५६	२१४	३०६
जापान	२८४	१२०	३४७
नेदरलैण्ड	१७४	३०२	३२६
नौरवे	७०२	८०८	१२४८
पोरटूगल		१५२५	१४२९
स्पेन	२३	१०९	१०४
स्वीडेन	१८२	२९७	३३९
युनाइटेट किंगडम	१०००	१९९४	२०४६
युनाइटेड स्टेट	४७९	२१३	२६१
अन्य देश	१२१३	४८०१	२६०६

८

वायुयान

वर्तमान युग में इनका श्रीगणेश गत शताब्दी ही में हुआ है। सर्वप्रथम गर्म हवा भर कर गुब्बारों को उड़ाया गया। यह गुब्बारे वायु में थोड़े ही ऊपर जाकर गिर पड़ते थे। Stephenson और Joseph दो अमेरिकन भाइयों ने सर्वप्रथम एक ऐसा गुब्बारा बनाया जिसमें मुर्गी, भेंड़ और बत्तख को बैठाकर उड़ाया गया। यह गुब्बारा डेढ़ मील ऊँचाई तक उड़ गया और जब नीचे उतरा तो तीनों जानवर जिन्दा पाये गये। इसके बाद Marquis Auslands और Rogers ने ऐसे गुब्बारे बनाये जिनमें वे स्वयं बैठकर उड़ा करते थे। यह गुब्बारे गर्म हवा की शक्ति से उड़ाये जाते थे। इसी समय हाइड्रोजन गैस (जो हवा से १।१४ गुना भारी है) का आविष्कार हुआ। इसकी सहायता से प्रोफेसर चार्ल्स और राबर्टस नामक दो व्यक्ति रेशमी कपड़े के एक गुब्बारे में उड़े। इन गुब्बारों में उड़ना वास्तव में बड़ा खतरनाक था क्योंकि जहां भी गैस समाप्त होने लगती थी गुब्बारा नीचे गिर जाता था। वैसे भी आकाश में जिधर हवा चाहती थी इसे ले जाती थी। इस कठिनाई को दूर करने के लिये जर्मनी के काउंट जेबलिन ने सर्वप्रथम एक ऐसा इंजिन बनाया जो गुब्बारे को मनोनीत दिशा में मोड़ सकता था। बस यही वायुयान के सिद्धान्त का जन्म दिवस है।

गुब्बारे में यद्यपि उक्त सुविधाएँ थी फिर भी वह वायु में पक्षियों की भाँति न तो रुक ही पाता था और न इच्छानुसार स्थान पर उतर ही पाता था। अमेरिका के Oliver Bill और Willber ने जो कि साइकिल का काम करते थे, सर्वप्रथम एक ऐसा वायुयान बनाया जिसका रूप चील की भाँति

था और जो सर्वप्रथम केरोलिना रियासत में उड़ाया गया किन्तु कई बार प्रयत्न करने पर भी यह वायु में एक मिनट से अधिक न ठहर सका। अन्त में बहुत अधिक यत्न करने पर इन्होंने एक ऐसा वायुयान बनाया, जिसका प्रदर्शन, १० दिसम्बर १६०३ ई० को किया गया था, जो २० मिनट तक हवा में रुक सका। इसके बाद दिन प्रतिदिन इस क्षेत्र में उन्नति ही होती जा रही है। आज Hallicopter और Rocket जैसे वायुयान भी बन चुके हैं। Hallicopter को उतरने के लिए न तो बड़ा मैदान चाहिए और न उड़ने के लिए मीलों का क्षेत्र।
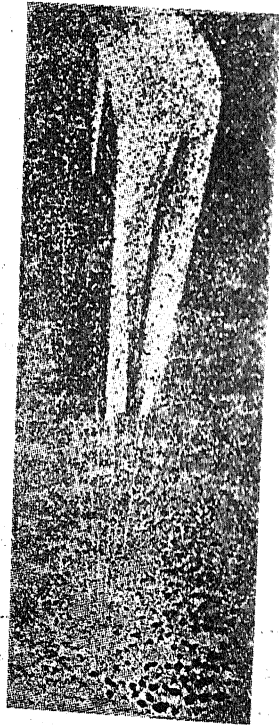
गुब्बारा

अपनी गति में अनुपम है इसकी रफ्तार ४०० मील प्रति घंटा है, इसी के द्वारा वैज्ञानिक चन्द्रमा तक पहुँचने के स्वप्न देख रहे हैं ।

वायुयान का निर्माण लगभग उसी सिद्धान्त पर हुआ है जिस पर पानी के जहाज का । वहां पानी की उछाल जहाजको पानीमें डूबने से बचाती है और यहां हवा की उछाल वायुयान को ऊंचा उठने में मदद देती है । उसके Propoellers पानी को पीछे की ओर फेंक कर जहाज को आगे यढ़ाते है । और वायुयान के Propellers हवा को चीर कर Screw की तरह इसे ऊपर उठने में मदद देते हैं । वास्तव में वायुयान इतनी तेजी से उड़ाये जाते हैं कि वह स्वयं हटाई हुई हवा से हल्का हो जाता है और हवा उसके पंखों पर ऊपर की ओर इतना उछाल डालती है कि वायुयान आकाश में जाता है । इसीलिए जिस प्रकार चील आकाश में अपने पंखों को रोक कर तैरती है उसी प्रकार वायुयान भी अपने इंजिन और Propellers को बन्द करके आकाश में तैर सकता है । इस समय हवा की उछाल, उसका रुख और वायुयान का भार तीनों का सन्तुलन है । वायुयान की कम से कम रफ्तार १०० मील प्रति घंटा होना चाहिये ताकि वह हवा में अपने को स्थिर रख सके और नीचे न गिर जावे ।

वायुयान के अंग––वायुयान प्रायः ड्यूरेलिमिन (Duralimin) नामक धातु का बना होता है यह धातु अलमोनियम (Aluminium),मैगनेशियम (Magnasium), ताँबा, (Copper), लोहा (Iorn) और मैगनीज
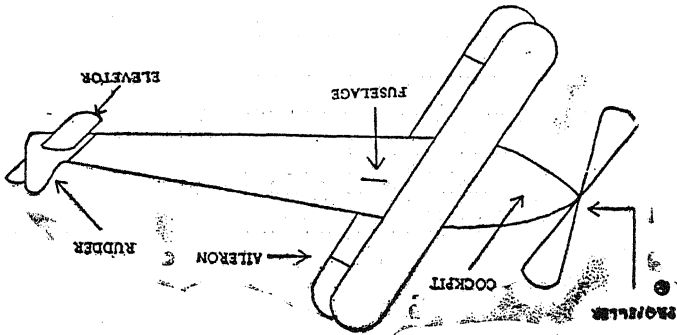
(Manganese) नामक धातुओं के मिश्रण से तैयार की जाती है। यह धातु बहुत हल्की होती है। वायुयान के अंग तथा उनके कार्य निम्नांकित हैं:—

प्लेन या पंख—जब वायुयान चलाया जाता है तब वह प्रथम जमीन पर काफी दूर तक दौड़ता रहता है। उसके दौड़ने से वायु का दबाव इसके पंखों पर ऊपर की ओर पड़ता है और वायुयान उड़ने लगता है। यह पंख पक्षियों के परों की तरह होते हैं।

इंजिन—(Engine) यह वायुयान में आगे की ओर रहता है। इसी के द्वारा वायुयान को उड़ने की शक्ति प्राप्त होती है। इसका संचालन पेट्रोल द्वारा होता है।

प्रोपेलर (Propeller or Air screw)—जहाज के आगे पंखे की भाँति लगा रहता है। यह हवा को चीर कर पीछे की ओर फेंकता है जिस प्रकार Screw लकड़ी में घुसता है उसी प्रकार यह भी वायु में स्थान बनाता चलता है इसीलिए इसे Air Screw भी कहते हैं। इसके द्वारा हवा जितनी तेजी से पीछे की ओर फेंकी जाती है, वायुयान उतना ही तेज चहता है।

रडर (Rudder of Tail Plane)—यह पंख लम्ब के रूप में (Vertical) वायुयान के पीछे की ओर लगा होता है और वायुयान के आगे के हिस्सों की चाल को संभाले रहता है।

एलीवेटर (Elevator)—यह Rudder के पीछे कब्जों से लगे रहते हैं इनके द्वारा वायुयान की दिशा बदली जा सकती है। इसी के द्वारा वायुयान को ऊँचा-नीचा भी किया जा सकता है। जब Elevator को उठा दिया जाता है तो वायुयान ऊपर उठने लगता है और जब नीचे गिरा देते हैं तो जहाज नीचे उतरने लगता है।

काक-पिट (Cock-Pit)—Engide के रखने के स्थान ही को Cock-Pit कहते हैं। यहीं पर वायुयान चालक (Pilot) के बैठने की भी जगह होती है।

फ्यूसिलेज (Fusilage)—इस स्थान पर यात्री बैठते हैं तथा उनका माल आदि भी लादा जाता है। चालक के पीछे यह स्थान होता है।

वायुयान से लाभ;–इसका निर्माण तो लोक-कल्याण के लिए हुआ था किन्तु अब इनका प्रयोग लड़ाई के लिए भी किया जाता है। फिर भी इसके निम्नांकित लाभ हैं––

१. व्यापार तथा यातायात (Communication) की सरलता।

२. यात्रियों को शीघ्रता से इधर से उधर पहुँचाना। मार्ग के पर्वत, नदी और समुद्र आदि जिनको पार करना वर्षों का कार्य था, घंटों में इसके द्वारा पार किये जाते हैं।

३. डाक आदि भी अब इसके द्वारा भेजी जाती है। जिसे Air Mail Service कहते हैं।

४. लड़ाई के दिनों में तो इसका उपयोग बहुत अधिक बढ़ जाता है। दुश्मन के पनडुब्बी जहाजों का पता लगाना; उसकी छावनियों पर बम गिराना; तथा अपनी सेना के लिए आवश्यक वस्तुएँ लाना इसीके द्वारा सम्भव है।

५. आजकल यह मनोरंजन का भी साधन बन गया है। बड़े-बड़े नगरों में Flying Clubs खुल गये हैं जिनमें हवाई जहाज उड़ाने की शिक्षा दी जाती है।

भारतवर्ष में द्वितीय महायुद्ध के पहले हवाई जहाजों का प्रयोग बहुत कम किया जाता था केवल सरकारी कर्मचारी ही इनका लाभ उठाते थे, किन्तु १९३९ ई० के बाद भारतवर्ष में इनका प्रयोग बढ़ गया है। अब जन साधारण भी किराया खर्च करके इनके द्वारा आ जा सकते हैं। अनेकों Air Services जिनके मालिक यहीं के धनाढ्य व्यक्ति अथवा कम्पनियाँ हैं खुल गई हैं। यह Services विश्व के अनेकों नगरों तक हमें पहुँचाया करती हैं। हां, इनका किराया अवश्य बहुत अधिक है जो वायुयान के अधिक प्रचलित हो जाने पर आशा है कम हो जावेगा। यदि इसी गति से विज्ञान उन्नति करता रहा तो एक दिन अवश्य ऐसा समय आवेगा कि हम सब सरलता से इसे प्राप्त कर सकेंगे और आज जिस प्रकार मोटर आदि में बैठकर स्थल की सैर करते हैं आकाश की भी सैर किया करेंगे।

भारत की प्रमुख Air Services निम्नांकित हैं--

१. इंडियन नेशनल एयरवेज, नई दिल्ली ।

२. डालमियां जैन एयरवेज, देहली ।

३. भारत एयरवेज, कलकत्ता ।

४. एयर सर्विसेज आफ इंडिया लिमिटेड, बम्बई ।

५. दकन एयरवेज लिमिटेड, पूना ।

यह सर्विसेज उन्हीं स्थानों से उन्हीं स्थानों तक होती हैं जहां एरोड्रोम होते हैं जिस प्रकार रेलगाड़ियों के रुकने और चलने के स्थान को रेलवे स्टेशन कहते हैं उसी प्रकार उन स्थानों को जहसे वायुयान यात्रियों तथा सामान को लेकर उड़ते या उतरते हैं और जहाँ उनकी मरम्मत (Repairs) की जाती है तथा जिन स्थानों पर उन्हें रखा जाता है Aerodrome (एयरोड्रम) कहते हैं ।

विश्व की प्रमुख उड़ानें:--

१. सर जोन एलकाक (Sir John Alcock) और सर ए० डब्लू० ब्राउन ने १६ घंटे में आयरलैण्ड से न्यूफाउन्डलैण्ड तक की यात्रा की । १८६० मील की यह यात्रा निरन्तर अटलांटिक महासागर के ऊपर १६१६ ई० में की गई ।

२. एमेलिया इयरहर्ट (Amelia Earhert) सर्वप्रथम अकेले उड़ने वाली औरत थीं । इन्होंने १६३२ ई० में १३। घंटे में अमेरिका से यूरोप तक की यात्रा की ।

३. डिटमैन (Dittman) ने १६३६ ई० में ८,८६० फीट की ऊँचाई तक उड़कर World Record कायम किया ।

४. अभी तक अधिक से अधिक २८ घंटे तक निरन्तर उड़ा जा सका है । १६३८ ई० में म्युरे (Murray) और जे० एस० स्प्राउल (J. S. Sproule) इतने देर तक उड़े थे ।

भारत में वायु मार्ग

१९११ में ही भारत में वायुयानों की उड़ान आरंम्भ हो चुकी थी । पहले पहल ब्रिस्टल एरोप्लेन कम्पनीने इंगलैण्ड से एक सैनिक अधिकारी द्वारा प्रायोगिक रूप में एक वायुयान उड़ाकर भारत में भेजा था । फरवरी १९११ में M. Picquat एम पीक्ट नामक उड़ाका प्रयाग से नैनीताल के लिये उड़ा और सरकारी डाक लेकर यह उड़ान की गई थी । यह उड़ान डाक के परिवाहन के रूप में वायु
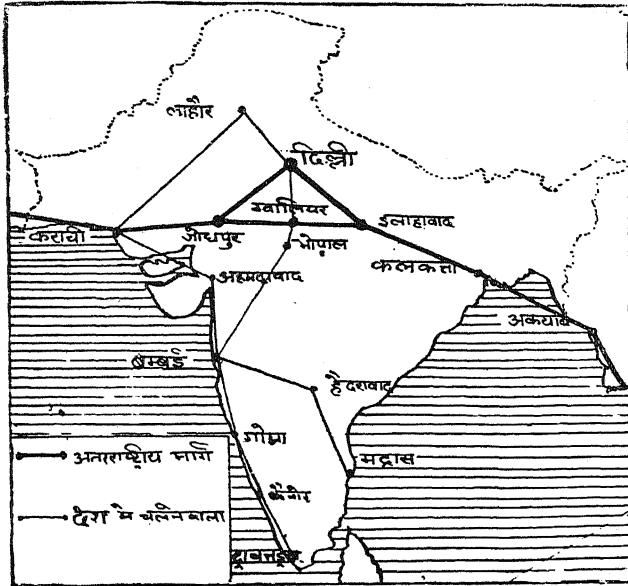
भारत के हवाई मार्ग

यान द्वारा संसार में पहली बार हुई थी । पीक्ट का उद्देश्य वायुयान का प्रदर्शन जनता में करना था । १९११ में मुसाफिर के रूप में पहले व्यसिरसेफ्टन बैकर वायुयान पर भारत उड़े ।

१६१८ में युद्ध समाप्त होने पर वास्तविक रूप से भारत में वायु यातायात का प्रारम्भ होता है। १६१८ में पहली बार कैप्टन एस स्मियमिस्त्र भारत तक उड़े और १६१६ में इंगलैण्ड से भारत तक मैलर्नऔर लैफटीनेन्ट हेली उड़कर के भारत आये। उसी वर्ष कैप्टन एस० स्मिथ और लैशीथ स्मिथ पहली बार इग्लैण्ड से आस्टलिया भारत होते हुए गुजरे। १६२७ में भारतवर्ष में वायुयान विभाग की स्थापना, पहली बार भारतवर्ष में हवाई अड्डा और उड़ान कल्बों की स्थापना हुई, भारतीय सैनिक अधिकारी वायुयान की शिक्षा के लिये विदेश में भेजे गये। इसके पूर्व ही १६२० में भारतसे वायुयान द्वारा डाक ले जाने की व्यवस्था की गई। पर छः सप्ताह में ही यह व्यवस्था सफल न हो सकी १६२५ में इंग्लैण्ड के वायुयान संचालकपथ को भारत व इगलैण्ड के बीच वायुयान सम्बन्धी सेवा करने का अवसर दिया में जो लोग विशेष शिक्षा प्रात्प करने विदेश गये उन्हें भविष्य में वायुयान विभाग में उच्च नौकरी देने का निश्चय किया गया।

संसार में वायुयान द्वारा परिवाहन का विकास होने के कारण संसार के वायुयान के मानचित्र में भारत महत्व पूर्ण स्थान प्रात्प करने लगा इसके मूल में भारतकी भौगोलिक स्थिति थी। अत्यन्त कयठनायों एंव अन्तरराष्ट्रीय अड़चनों के रहते हुऐ भी १६२६ में भारत व इग्लैण्ड के बीच वायुयान का आवागमन प्रारम्भ हुआ भारतवर्ष में पहले पहल वायुमार्ग कराची से दिल्ली तक निर्धारित दिया गया।

तब तक भारतके विभिन्न राज्यों में उड़ान कल्बों द्वारा काफी नवयुकों को वायुयान सम्बन्धी शिक्षा दी जाती थी। १६३०के अंत में भारत में केन्द्रीय सरकार की सहायता से छः उड़ान क्लबों में लोग शिक्षा पा रहे थे। तथा उड़ाके इन्जीनीयर इस परिवाहन व्यापारिक रूप में उपयोग करनेलिये सन्नध किये जा रहे थे। इंन्डियन नेशनल एयरवेज द्वारा १६३२ में कराची से कोलम्बों तक और कराची से लाहौर तक वायुयान सेवा की व्यवस्था की गई। सरकार ने इन्हें डाक ले जानेका भी ठेका दिया। १६३३ में निश्चत रूप से वायु यान द्वारा यातायात सेवा अपना रूप ग्रहन करने लगी। यह सेवा मूल तः इन्डियन कान्टीनेटल एयरवेज लिमिटेड द्वारा की गई। दिसम्बर १६३४ में क्वाताज

इम्पायर लाईन्स लिमिटेडमें इंगलैड व आस्टेलिया के बीच उड़ान का कार्य आरम्भ हुआ । उसमें भारत व सिगांपुर का मार्ग अपनी वायुयान यात्राके लिये निर्धारीत हुआ । इस से वायुयान यात्राका मार्ग विकसित होने लग ।होने मेंसहायता लमि इसके बाद ब्रिटिश सरकार ने यह निश्चित किया कि वह सभी डाक हवाई में से ही भेजे गी जिस से हवाईयातायात के विकास में भारत वर्ष में काफी प्रगति हुई । इस के द्वारा विदेशों से आये वायुयान कंराची लाहौर व दिल्ली से होकर गुजरते थे । भारतवर्ष में १९३८ में हवाई यातायात के रास्ते की लम्बाई ५१७० मील थी । उस समय तक ( ) इस सेवायें कर रही थी सामरिक कारणों से बहुत बड़ी शक्ति इसके विकास की ओर लगाई गई । भारत के वायु परिवाहन ने बहुत बड़ी सेवा की । जब जापान युद्ध में प्रविष्ट हुआतो यह अत्यन्त ही आवश्यक हो गया कि हवाई यातायात के सभी साधन युद्धोनुनक्त
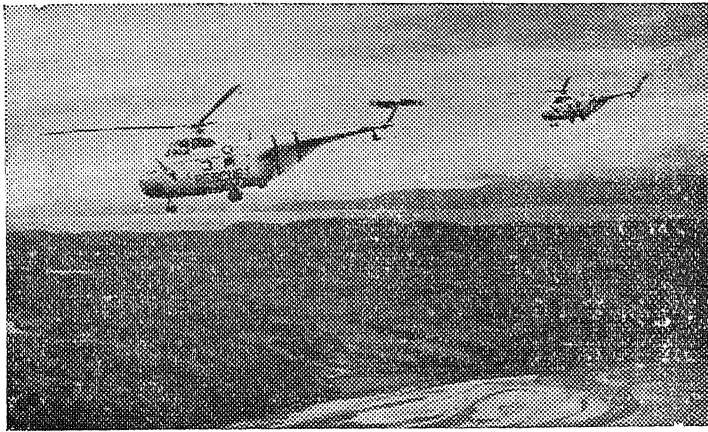
राकेट-विमान

कर दिये जायँ । इसका परिणाम यह हुआ कि सभी हवाई यातायातकी कम्पनियोंको सुरक्षा विभाग का कार्य करना पड़ा । युद्ध की आवश्यकता ने भारत में वायुयान

सम्बन्धी कारखाना भी खोलने के लिये सरकार को बाध्य किया और बैंगलौर में भारत में हिन्दुस्तान एयर कौफ्ट कम्पनी लिमिटेड नाम की संस्था सरकार मी सहायता से वायुयान सम्बन्धी निर्माण के लिये खोली गई। युद्ध के समाप्त होते-होते भारतवर्ष के पास सैकड़ों हवाई अड्डे हो गये, जिनमें अनेक तो २००० फीट लम्बे हैं।

१--करांची से जोधपुर, दिल्ली, इलाहाबाद तथा कलकत्ता तक। इसके बाद यही मार्ग अक्याब, रंगून होकर आस्ट्रेलिया तक जाता है। वस्तुतः यह यूरोप से आस्ट्रेलिया तक के आकाश मार्ग का ही एक भाग था।
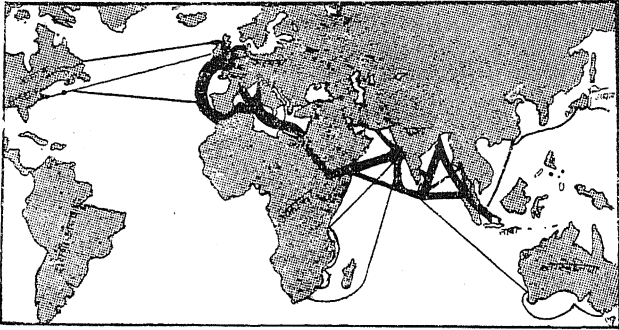
विश्व-वायुयान मार्ग

२--कराँची से अहमदाबाद होते हुए बम्बई को। फिर वहां से एक शाखा हैदराबाद से होकर मद्रास को और दूसरी गोआ होती हुई त्रिवेन्द्रम को जाती है।

३--कराची से लाहोर को।

यूरोप से आने वाले वायुयानों का केन्द्र कराँची होने के कारण वहीं से हमारा देश भीतरी आकाश-मार्गों का भी आरम्भ-बिन्दु माना गया था। अब वह स्थान बम्बई ने ले लिया है।

द्वितीय महायुद्ध के समय विशेषतः जापानी आक्रमणों से बचने की चेष्टा से बहुत से एरोड्रोम्स बनवाये गये और आज साधारण स्थिति में ४०० एरोड्रम्स

हमारे देश में कायम थे, पर युद्ध के बाद की योजनाओं के अनुसार भारत सरकार ने आर्थिक नुकसान के कारण उसे घटा दिया और कुल ६६ एरोड्रोम्स अब हैं।

वायु मार्ग का प्रचार हो जाने के बाद भी हमारे देश में वायुयान उड़ाने वाली कम्पनियां अधिकांश विदेशी ही थीं, पर धीरे-धीरे देशी कम्पनियों ने भी वायुयान उड़ाने का कार्य लिया जो निम्नलिखित हैं:—

१—एयर इण्डिया लिमिटेड, बम्बई—इसके जहाज निम्नलिखित आकाश मार्गों पर उड़ते हैं:—

१—करांची, अहमदाबाद, बम्बई।

२—हैदराबाद, मद्रास, कोलम्बो।

३—बम्बई, दिल्ली।

४—बम्बई, मद्रास, कोलम्बो।

५—मद्रास, बम्बई।

६—बम्बई, अहमदाबाद, जयपुर, दिल्ली।

७—बम्बई, कलकत्ता।

८—मद्रास, बंगलोर, कोचीन, त्रिवेन्द्रम्।

२—इंडियन नेशनल एयरवेज, लिमिटेड, नई दिल्ली—

१—दिल्ली, कलकत्ता।

२—दिल्ली, जोधपुर, करांची।

३—कलकत्ता, रंगून।

४—दिल्ली, लाहौर।

५—दिल्ली, अमृतसर।

३—एयर सर्विसेज आफ इण्डिया लिमिटेड, बम्बई—

१—बम्बई, पोरबन्दर, जामनगर, करांची।

२—बम्बई, भूपाल, कानपुर, लखनऊ।

३—जामनगर, अहमदाबाद, बम्बई, भावनगर।

४—बम्बई, ग्वालियर, दिल्ली।

४—दकन एयरवेज लिमिटेड, बेगमपेट—

१—दिल्ली, भूपाल, नागपुर, हैदराबाद, मद्रास ।

२—हैदराबाद, बंगलोर ।

३—हैदराबाद, बम्बई ।

५—मिस्त्री एयरवेज लिमिटेड, बम्बई ।

१—बम्बई, नागपुर, कलकत्ता ।

६—अम्बिका एयर लाइन्स लिमिटेड, बम्बई—
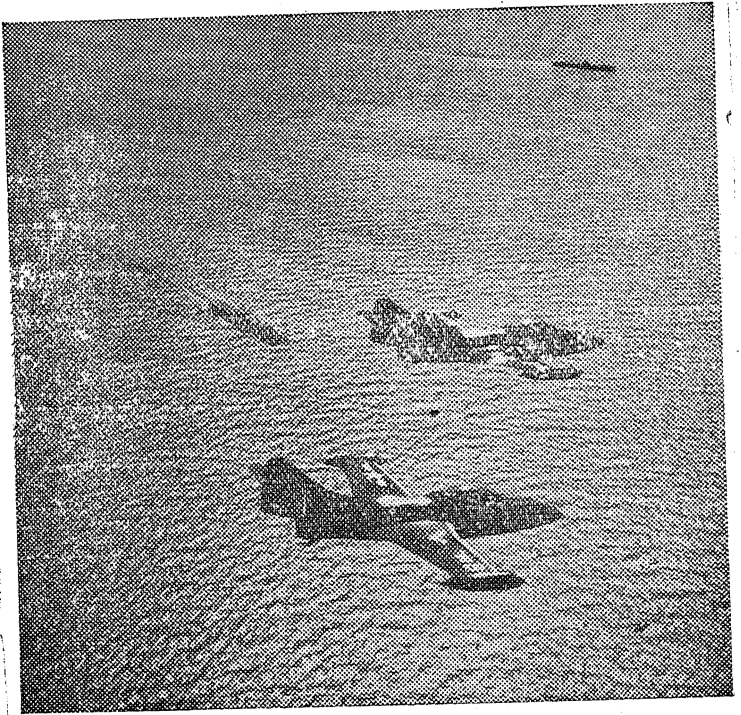
बमवर्षक वायुयान

१—बम्बई, बंगलोर ।

२—बम्बई, बड़ौदा, भावनगर, अहमदाबाद ।

३—बम्बई, जोधपुर ।

४—बम्बई, राजकोट, मूर्वी ।

५—बम्बई, बंगलोर ।

७—एयर सर्विसेज आफ इण्डिया—

१—जामनगर, माण्डवी, भूज ।

८—एयरवेज इंडिया लिमिटेड, कलकत्ता—

१—कलकत्ता, विजगापट्टम, मद्रास, बंगलोर ।

१—कलकत्ता, बिजगापट्टम, मद्रास, बंगलोर ।

२—कलकत्ता, गौहाटी, डिब्रूगढ़ ।

३—कलकत्ता, नागपुर ।

४—भारत एयरवेज़ लिमिटेड, कलकत्ता—

१—दिल्ली, लखनऊ, पटना, कलकत्ता ।

२—पटना, बनारस ।

३—दिल्ली, अमृतसर ।

३—कलकत्ता, चटगांव ।

५—दिल्ली, मद्रास ।

६—हैदराबाद, बंगलोर ।

१०—ओरिएन्ट एयरवेज लिमिटेड, कलकत्ता—

१—कलकत्ता, अक्याब, रंगून ।

२—करांची, कलकत्ता ।

११—डालमिया जैन एयरवेज—

१—दिल्ली, अमृतसर, श्रीनगर ।

१२—इण्डियन ओवरसीज एयर लाइन्स (स्टार लाइन)—

१—मद्रास, लखनऊ, मद्रास ।

२—नागपुर, जबलपुर, इलाहाबाद, कानपुर, लखनऊ ।

३——नागपुर, हैदराबाद, मद्रास ।

१३——जुपिटर एयरवेज——

१——दिल्ली, नागपुर, विजगापट्टम, मद्रास ।

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित विदेशी कम्पनियों द्वारा भी वायुयान हमारे देश के आकाश मार्ग से होकर गुजरते हैं ।

१——पान अमेरिकन वर्ल्ड एयरवेज——कलकत्ता से न्यूयार्क को करांची, इस्तम्बूल, लन्दन, शन्नान होते हुए ।

कलकत्ता से सेनफ्रान्सिसको को बंकाक, शंघाई, टोकियो, वेक, होनोलुलू होते हुए ।

२——एयर फ्रान्स——पेरिससे सेगोन तक टयूनिस, काहिरा, करांची, कलकत्ता होते हुए ।

३——ब्रिटिश ओवरसीज एयरवेज कारपोरेशन——लन्दन से कलकत्ता को वोडेक्स, काहिरा, बसरा, करांची, दिल्ली होते हुए ।

४——के० एल० एम०——करांची से कलकत्ता, करांची से बंकाक, करांची से सिंगापुर, करांची से बटाविया । इनके अतिरिक्त ट्रांसवर्ल्ड एयरलाइन, चाइना नेशनल एविएशन कारपोरेशन तथा एयर सीलोन द्वारा भी क्रम से वाशिंगटन——बम्बई, कलकत्ता——हांगकांग और कोलम्बो——मद्रास को वायुयान उड़ाये जाते हैं ।

धीरे-धीरे देशी कम्पनियों की संख्या बढ़ती जा रही है । जून १९४८ तक २३ भारतीय कम्पनियां ४२२ करोड़ की पूंजी के साथ इस कार्य में लगी हुई थीं । कुल एयरक्राफ्ट इस समय तक ६१४ हो चुके थे जब कि दिसम्बर १९४७ तक केवल ५५१ थे । अतः इस दिशा में बहुत ही उन्नति की आशा है ।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद सरकार की ओर से हवाई यातायात की नींव इस देश में डाली गई । सर्वप्रथम यह कार्य श्रम-विभाग के हवाई यातायात मण्डल की स्थापना कर उसे सौंपा गया, साथ ही टेकनीकल मामले की देखरेख का भार भी इसी पर था । १९१९ में भारत अन्तरराष्ट्रीय हवाई यातायात सम्बन्धी बात को मान कर अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में आया ।
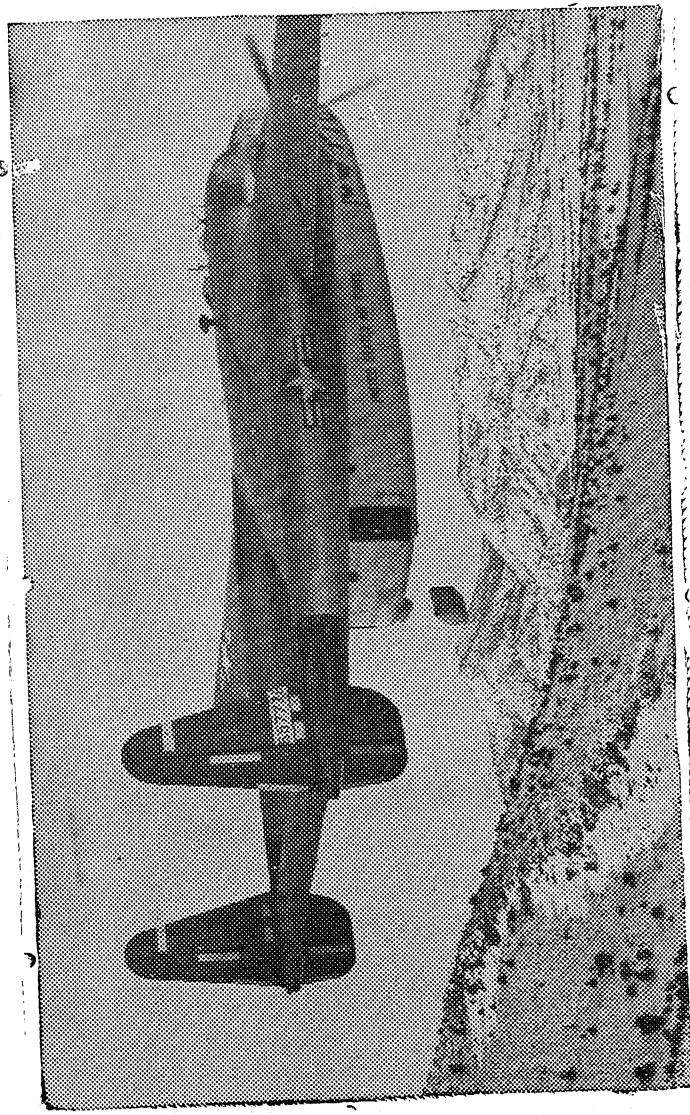
नये ढंग का विमान

१९२७ में एक संचालक की देख-रेख में सिविल एवियेशन की स्थापना हवाई उड़ान की व्यवस्था एवं भारत में उसकी उन्नति के लिये की गई। यह विभाग द्वितीय विश्व युद्ध के प्रारंभ होने के पूर्व तक कार्य करता रहा। उसके बाद इसका कार्य एक डायरेक्टर जनरल के अन्तर्गत कर दिया गया जिसमें विभिन्न भागों के उप-संचालक नियुक्त किये गये जो अपने-अपने विभाग का कार्य करते रहे। आज-कल यह विभाग केन्द्रीय परिवाहन विभाग से सम्बद्ध है जो (पोस्ट और टेलीग्रम) डाक व तार विभागका भी नियन्ता है। इस कारण हवाई यातायात से डाक के परिवाहन का विशेष रूप से कार्य लिय जा रहा है। साथ ही एक हवाई लाइसेन्स बोर्ड की स्थापना की गई है, जो हवाई यातायात सम्बन्धी सभी प्रकार के लाइसेन्स देने व नियंत्रित करने का कार्य राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय दोनों क्षेत्रों
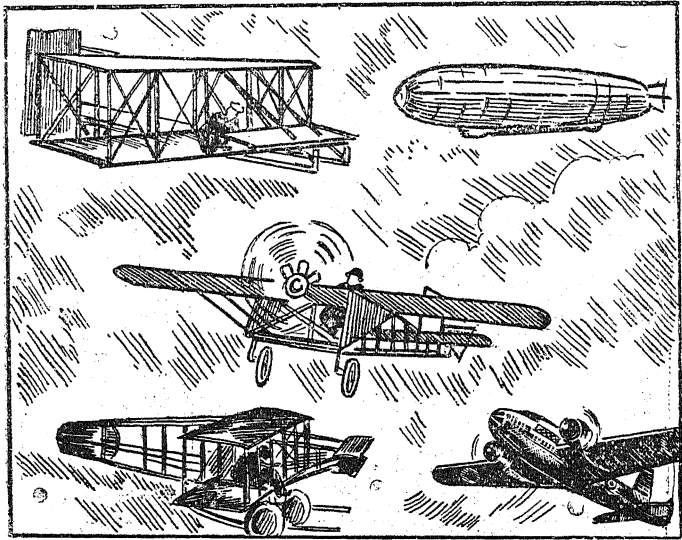
में कर रहा है। हवाई सैनिक विभाग भी अपनी कार्य दक्षता के लिये अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्य कर रहा है। और उसने यहां तक सफलता प्राप्त की है। ऊँची

उड़ान में कश्मीर में उसने नया मानदण्ड स्थापित किया है। सामाजिक व सैनिक यातायात की सामूहिक, सुचारु उन्नति के लिये एक समिति बनाई गई भारत में हवाई पथ का विकास वे लोग इस प्रकार सम्पन्न करें कि कम से कम यत्न द्वारा अधिक से अधिक विकास हो सके। सिविल एवियेशन के प्रधान संचालक
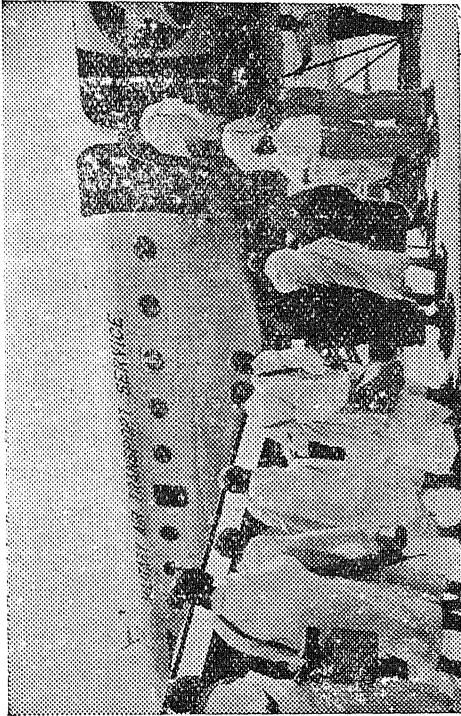
इस विभाग के लाइसेन्सिग के अतिरिक्त भारत में नियन्ता है। उनकी सहायता के लिये तीन उप-संचालक हैं। इसके संचालक मण्डल में ७ संचालक हैं, जो अपने विभाग तथा डिप्टी डायरेक्टर जनरल के विभागों के लिये दायी हैं।

निम्नलिखित ७ विभाग होते हैं :—

१—शासन

२—यातायात

३—शिक्षा, दिशा व लाइसेंस

४—परिवेक्षण व निरीक्षण

४—हवाई मार्ग व हवाई अड्डे

६—आवागमन

७—सूचना और विधान

इसके अतिरिक्त प्रधान निरीक्षक हैं। इसका कार्य-क्षेत्र दुर्घटनाओं तक सीमित हैं।

हवाई मार्ग व हवाई अड्डे—

१९३१ में हवाई मार्गों व हवाई अड्डों का कार्य चार नियंत्रित हवाई अड्डों, कराँची, दिल्ली, इलाहाबाद व कलकत्ते से प्रारंभ हुआ। इन स्टेशनों के नियंत्रण के लिये (एयरट्रेफिक कंट्रोल) हवाई यातायात नियंत्रण चार अधिकारियों को कार्यभार सौंपा गया। धीरे-धीरे इनका कार्य प्रारंभ हुआ और द्वितीय विश्व-युद्ध के प्रारम्भ होने पर हवाई अड्डों और उनके मार्गों पर सैनिक विभाग के अधिकारियों तथा सिविल एवियेशन विभाग सुस्थिर तथा सम्पन्न हो गया था। युद्ध के समय इनका और भी द्रुतगति से विकास हुआ। हवाई अड्डों और हवाई मार्गों की संख्या बढ़ी फिर भी सुचारु व्यवस्था सम्बर्धन शील से चलती रही।

———————

१

डाक एवं तार परिवाहन

डाक-व्यवस्था

किसी भी देश की सभ्यता और उन्नति की कसौटी उस देश के यातायात तथा विभिन्न क्षेत्रों में शीघ्रतापूर्वक होने वाले कार्य हैं । उन्नत डाक-प्रणाली का आधुनिक युग में विशेष महत्व है । औद्योगिक और व्यापारिक उन्नति का श्रेय बहुत कुछ डाक-प्रणाली को दिया जा सकता है । प्रसन्नता की बात है कि हमारा देश भी डाक व्यवस्था में किसी से पीछे नहीं है । डाक-विभाग में विज्ञान के आधुनिकतम साधनों का व्यवहार किया जा रहा है ।

इतिहासः—इस देश में डाक की व्यवस्था सभ्यता के उदय के साथ ही आरंभ हुई । इस देश में बहुत पहले से डाक भेजने की व्यवस्था है । पहले हरकारों द्वारा डाक भेजी जाती थी, पर इसमें समय लग जाता था । हरकारों के बाद तेज साँड़नी सवारों का प्रबन्ध हुआ । प्रसिद्ध यात्री इब्नबतूता ने यहाँ की प्राचीन डाक-प्रणाली का विवरण अपनी यात्रा-सम्बन्धी पुस्तक में किया है । शेरशाह सूरी ने डाक को सवारों द्वारा भेजने का प्रबन्ध सारे राज्य में किया । अकबर बादशाह ने दस-दस मील पर डाकखाने बनवाये, पर मुगल-साम्राज्य के साथ ही उनका प्रबन्ध भी विनष्ट हो गया ।

डाक भेजने की व्यवस्था लार्ड क्लाइव ने सन् १७६६ में की, पर यह केवल सरकारी डाक के लिये ही थी । जनता उसका उपयोग नहीं कर सकती थी । वारेन हेस्टिंग्ज ने अपने समय में डाक-विभाग को सर्वसाधारण के व्यवहार के लिये सन् १७७४ में खोल दिया । लार्ड डलहौजी ने इस विभाग की और उन्नति की । उन्होंने

पत्र भेजने के खर्च को घटा दिया और डाक के टिकटों का इस्तेमाल प्रारंभ कराया। सन् १८५४ के १७ एक्ट के अनुसार डाक-प्रबन्ध डाइरेक्टर-जनरल के हाथ में आ गया। डाक के टिकटों का व्यवहार पहले-पहल सिन्ध में सन् १८५२ में हुआ। ये टिकट तीन प्रकार के थे। आधुनिक डाक-विभाग का संगठन सन् १८९८ के छठें एक्ट के अनुसार चल रहा है।

पोस्ट आफिस के विषय की सब प्रकार की सूचना एक छोटी-सी किताब से जिसको पोस्टल-गाइड कहते हैं, प्राप्त हो सकती है। प्रत्येक नागरिक को डाकखाने के विषय में पूर्ण ज्ञान होना चाहिये।

भारतवर्ष में आजकल पोस्टकार्ड तीन पैसे का और लिफाफा दो आने का आता है। एक प्रकार का ६ पैसे का पोस्टकार्ड भी चला है, जो बहुत बड़ा होता है और लिफाफे की भाँति मोड़ कर भेजा जाता है। स्थानीय एक ही नगर के भीतर समाचार भेजने के लिये दो पैसे का भी पोस्टकार्ड होता है। पत्र या लिफाफे पर पता लिखकर उसे डाकखाने में छोड़ दिया जाता है और यह पानेवाले के पास पहुँच जाता है। यदि पता लिखने में गलती हो जाती है या कोई कमी रह जाती है तो वह लावारसी पत्रों के कार्यालय (Dead Letter Office) में पहुँच जाता है। यहाँ यदि भेजने वाले का पता लग गया तो वापस कर दिया जाता है, नहीं तो कुछ समय बाद नष्ट कर दिया जाता है।

यदि पत्र भेजने का कोई प्रमाण रखना चाहे, तो दो पैसे का टिकट और लगाने से पत्र भेजने की सनद (Certificate of Posting) मिल जाती है। इस एक सनद में तीन पोस्टकार्ड या लिफाफे भेजे जा सकते हैं। रजिस्ट्री करके पत्र, लिफाफे या पारसल आदि इसीलिए भेजे जाते हैं कि पानेवाले के पास निश्चय ही पहुँच जायँ और भेजनेवाले के पास इसका प्रमाण भी रहे कि उसने अमुक पत्र अमुक व्यक्ति के यहाँ भेजा। भेजनेवाला यदि जानना चाहे कि मेरा रजिस्टर्ड पत्र या पारसल किस दिन पानेवाले के पास पहुँचा, तो एक आने का टिकट अधिक लगाकर 'एक्नालेजमेन्ट' (Acknowledgement) फार्म भर देना चाहिए। प्रत्येक रजिस्ट्री चिट्ठी या पारसल भेजने की रसीद मिलती है। यदि भेजी गयी वस्तु अथवा पत्र निर्दिष्ट स्थान पर न पहुँचे तो रसीद का नम्बर, तारीख और

पोस्ट-आफिस का विवरण राज्य केन्द्रीय पोस्टमास्टर-जनरल को लिखना चाहिए। किसी वस्तु को डाकखाने द्वारा भेजते समय उसका बीमा भी कराया जा सकता है। वस्तु के खो जाने पर डाकखाने को उस बीमे का मूल्य भरना होता है। बीमे की दर इस प्रकार है:—

१०० रु० तक के बीमे की डाकखाने की बीमा-फीस चार आना है।

१०० रु० से २०० रु० तक के बीमे की बीमा-फीस साढ़े पाँच आना है।

२०० रु० से ३०० रु० तक के बीमे की बीमा-फीस आठ आना है।

३०० रु० के ऊपर १००० रु० तक के लिए दो आने अतिरिक्त के हिसाब से लगेगा।

साधारण पोस्टकार्ड तीन पैसे को मिलता है। जबाबी पोस्टकार्ड छ: पैसे को मिलता है। लिफाफे का रेट दो आना है। लिफाफे की तौल १ तोला से अधिक न होनी चाहिए। तौल अधिक होने से प्रति अतिरिक्त १ तोले पर १ आने के हिसाब से टिकट लगाने पड़ेंगे। पोस्टकार्ड या लिफाफे को रजिस्टर्ड करके भेजने की फीस चार आने लगती है। यदि कोई यह चाहे कि पत्र अथवा लिफाफा मिलनेवाले को जल्दी मिल जाय, तो वह पोस्टकार्ड या लिफाफे पर दो आने का अधिक टिकट लगाकर (Express Delivery) लिख दे। पानेवाला चिट्ठी को जल्दी, और हस्ताक्षर करके पाता है। छपी हुई लिस्टें, निवेदन-पत्र, निमन्त्रण-पत्र, अखबार और मासिक पत्र आदि बुक-पोस्ट द्वारा (बिना रजिस्ट्री के) भेजा जा सकता है। इनको खुला हुआ भेजना पड़ता है, ताकि पोस्ट आफिस के कर्मचारी यदि चाहें तो खोलकर निरीक्षण कर सकें। बुक-पोस्ट के द्वारा पत्र कभी न भेजना चाहिये। बुक-पोस्ट में पहले पाँच तोले तक ३ पैसा और बाद में प्रति ढाई तोले एक पैसा अतिरिक्त के हिसाब से लगता है।

मनीआर्डर दो प्रकार से भेजा जाता है। एक तो साधारण ढंग से और दूसरे तार से। मनीआर्डर पर प्रत्येक १०) तक दो आना फीस लगती है। यदि तार द्वारा मनीआर्डर भेजना हो तो साधारण फीस के अतिरिक्त तार का खर्च और दो आने सप्लीमेन्टरी चार्ज देना पड़ता है। इन सब की रसीद मिलती है। यदि मनीआर्डर को हवाई जहाज द्वारा भेजना चाहें तो उस पर "By Air" लिख देना

चाहिए । फीस का पता डाकखाने से या पोस्टल-गाइड से चल जायगा ।

विदेशों को पत्रादि भेजने में नीचे लिखे हिसाब से टिकट लगते हैं:--

पत्र पर १ औंस तक सब देशों के लिए	...	०	३	६
पोस्ट कार्ड पर ...	...	०	२	०
छपे कागजों पर प्रति २ औंस	...	०	७	९
व्यापारिक कागजों पर १० औंस तक	...	०	३	६
पारसल पर ३ पौंड तक ...	...	१	११	०
३ पौंड से ऊपर और ७ पौंड से नीचे	...	३	५	०
७ पौंड से ११ पौंड तक	...	५	२	०
११ पौंड से २२ पौंड तक	...	८	५	०
रजिस्ट्री की सब चीजों के लिए	...	०	५	६
बर्मा को पोस्टकार्ड	...	०	१	०
बर्मा लिफाफा (प्रति तोला)	...	०	२	६

डाक व तार प्रबन्ध विभाग

भारत में डाक और तार-विभाग का नियन्त्रण डाक और तार के डाइरेक्टर-जनरल करते हैं। यह भारतवर्ष में इस विभाग के सर्वोच्च अधिकारी हैं। यह विषय केन्द्रीय सरकार का है और यातायात के मन्त्री के अधीन है। डाइरेक्टर-जनरल की सहायता के लिए डिप्टी-डाइरेक्टर और असिस्टेण्ट डिप्टी-डाइरेक्टर-जनरल हैं। शासन-प्रबन्ध की सुविधा के लिए पूरे देश को आठ वृत्तों में विभाजित किया गया है। पूर्वी पंजाब, बम्बई प्रान्त, मध्य प्रान्त, मद्रास प्रान्त, पश्चिमी बंगाल, आसाम प्रान्त, बिहार और उड़ीसा तथा उत्तर प्रदेश। प्रत्येक वृत्त के, आसाम के अतिरिक्त, एक पोस्टमास्टर-जनरल हैं। इनके नीचे डिविजनल सुपरिन्टेन्डेन्ट, इन्स्पेक्टर और हेड पोस्टमास्टर हैं। साधारणतया प्रत्येक जिले में सदर डाकखाने हैं और इनकी शाखाएँ मकड़ी के जाले की भाँति, प्रत्येक स्थान में फैली हुई हैं। प्रत्येक डाकखाने के कर्मचारी पोस्टमास्टर के अधीन काम करते हैं; उनका कार्य-विभाजन पोस्टमास्टर ही करते हैं। गांवों में डाक भेजने तथा

लाने का प्रबन्ध हरकारा करता है । नगरों में डाक रजिस्टरी आदि के वितरण का कार्य भी डाकिया ही करते हैं ।

डाक-विभाग के हिसाबों की जाँच पड़ताल के लिए एकाउन्टेन्ट-जनरल पोस्ट्स एण्ड टेलीग्राफ हैं । सन् १९१२ से पहले तार-विभाग अलग था; पर सन् १९१२ से सन् १९१४ तक में यह डाक-विभाग में पूर्णरूप से विलीन कर दिया गया है ।

डाकखानों की संख्या

सन्	संख्या	सन्	संख्या
१९३८-३९	२४३०३	१९४३-४४	२५८४१
१९३९-४०	२४७४१	१९४५-४६	२५९१६
१९४१-४२	२५५३६	१९४६-४७	२६१३०
१९४२-४३	२५६७१		

डाक-विभाग के सन् १९४६-४७ के आँकड़े

२२६३० लाख पत्रादि भेजे गये,
५२१ लाख मनीआर्डर भेजे गये,
३१ लाख बीमा करके भेजे गये,
१५.३ करोड़ के टिकट बेचे गये,
१७१.७ करोड़ के मनीआर्डर भेजे गये,
५६ लाख के पोस्टल-आर्डर बिके,
९२४९० आदमियों का बीमा हुआ,
सेविंग बैंक में हिसाब खोलने वालों की संख्या ३९७३००० तक पहुँची

वी. पी. का हिसाब ३०५० करोड़ रुपये
सेविंग बैंक का हिसाब १४२ करोड़
बीमा की रकम १९ करोड़ रुपये
१३३ करोड़ रु० की वस्तुओं को बीमा करके भेजा गया
२७२ लाख कस्टम ड्यटीज़ के रूप में वसूल हुआ

डाक सम्बन्धी उल्लेखनीय तिथियाँ

१८२५—भारत का प्रथम डाक-टिकट कराची (सिन्ध) में बिका ।

१८५१—पहले-पहल कलकत्ता और डायमंड हारबर के बीच टेलीग्राफ की लाइन लगी।

१८५४—दो पैसे वाला टिकट कलकत्ता में प्रथम बार छपा।

१८६५—इंगलैंड और भारत के बीच पहली बार टेलिग्राफ सम्बन्ध २७ जनवरी सन् १८६५ में हुआ।

१८७०—कलकत्ता में जनरल पोस्ट आफिस खुला।

१८७१—वी. पी. (Value Payable) प्रथा प्रारंभ हुई।

१८८०—मनीआर्डर भेजने की व्यवस्था हुई।

१८८५—पोस्टल सेविंग बैंक खुले।

१९११—हवाई जहाज द्वारा १८ फरवरी को ५५०० पत्रादि इलाहाबाद से नैनी भेजे गये।

१९२२—हवाई जहाज द्वारा इंगलैण्ड से कराची डाक पहुंची (६ अप्रैल सन् १९२२)

१९३१—नई दिल्ली की याद में टिकट निकाले गये।

१९३५—जार्ज पंचम की रजत-जयंती के उपलक्ष में टिकट निकाले गये।

१९४२—एयर ग्राफ सर्विस का प्रारंभ (२ फरवरी सन् १९४२)।

१९४६—फोटो टेलीग्राफ सर्विस का प्रारम्भ (३ जून सन् १९४६)।

१९४७—भारतीय संघ की ओर से स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष में तीन जयहिन्द के टिकट निकाले गये जिन पर अशोकस्तंभ, राष्ट्रध्वज और उड़ता हुआ हवाई जहाज छपा हुआ था।

१९४७—ओवरसीज-टेली-कम्युनिकेशन सर्विस को भारत ने खरीद लिया।

१९४८—मार्च में डाक के टिकटों की प्रदर्शनी दिल्ली में खोली गयी।

१९४८—स्वतन्त्रता के प्रथम वर्ष पूरे होने पर १५ अगस्त सन् १९४८ को गांधीजी की याद में टिकट निकाले गये।

१९४९—देवनागरी लिपि में तार भेजना प्रारम्भ हुआ (जून १९४९)।

१९४९—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, दिल्ली और नागपुर के मध्य नाइट एअर मेल सर्विस प्रारंभ की गई (३० जनवरी सन् १९४९)

बज उठती है और 'हेलो' की आवाज के साथ वार्ता आरम्भ हो जाती है । यही नहीं, अवकाश के समय लोग टेलीफोन से वार्तालाप द्वारा मनोविनोद भी करते हैं । कुछ लोग तो रेडियो भी सुनते देखे गये हैं ।

तार (Telegraph)

बहुत पहले से ही मानव-जगत इस बात का इच्छुक था कि समाचारों का आदान-प्रदान कम से कम समय में और अत्यंत कम खर्च में हो सके । पहले हरकारे डाक लेकर दौड़ते थे, उसके बाद घुड़सवार आये और बाद में तार, टेलीफोन और हवाई जहाज तक डाक के काम आने लगे । निस्सन्देह टेलीग्राफ अर्थात् तार के आविष्कार ने समाचारों के आदान-प्रदान में क्रान्ति मचा दी । टेलीग्राफ को पूर्ण रूप देने का श्रेय सेमुअल मोर्स नामक अमेरिकन वैज्ञानिक को है । यदि पूर्ववर्ती वैज्ञानिकों ने टेलिग्राफ के लिये क्षेत्र तैयार किया तो मोर्स ने मूर्त्त रूप देकर जन जीवन की अति स्मरणीय सेवा की है । मोर्स ने टेलीग्राफ को एक नयी भाषा प्रदान की जिससे कम से कम समय में विचारों का आदान-प्रदान हो सकता है । उससे इसका नाम ही 'मोर्स-पद्धति' पड़ गया है । मोर्स के बनाये हुए संकेतों द्वारा तार आते जाते हैं । इंगलैण्ड के चार्ल्स ह्वाट ने तथा एक अन्य सज्जन ने भी टेलीग्राफ के यंत्र में काफी सुधार किये ।

टेलीग्राफ के यंत्र की बनावट बहुत सरल है । इसमें तीन मुख्य भाग हैं:— समाचार भेजनेवाला (Transmitter), (२) खबर लेनेवाला (Receiver) और (३) तार की लाइन (Line wire) । खबर भेजनेवाले यंत्र को Key कहते हैं । पृथ्वी के ऊपर धातु के खम्भे लगा कर तार फैलाया जाता है और इसी से Key अर्थात् Transmitter का सम्पर्क Receiver से कर दिया जाता है । खबर लेनेवाला यंत्र (Receiver) बिजली के चुम्बक का बना होता है । इस चुम्बक के ऊपर लोहे की एक मुलायम पत्ती लगी होती है । इसके एक सिरे का सम्बन्ध एक स्प्रिंग से होता है और दूसरा सिरा दो कीलियों के बीच होता है । यह सिरा नीचे ऊपर हिल सकता है और साधारण रूप से ऊपर वाली कीली से बराबर लगा रहता है । जब चुम्बक में

टेलीफोन एक्सचेंज की व्यस्तता

खींचने की शक्ति आ जाती है तब लोहे की पत्ती का दूसरा सिरा खट से नीचे वाली कीली से लग जाता है। विद्युत का प्रवाह समाप्त होते ही दूसरा सिरा पुनः ऊपर वाली कीली से जा लगता है। खबर भेजनेवाला यंत्र, खबर लेनेवाले यन्त्र से भी सरल है। लकड़ी के तख्ते में धातु के दो टुकड़े लगे होते, हैं जिनके ऊपर धातु की छड़ी होती है। इस छड़ी के सिरे पर एबोनाइट का बटन लगा होता है और दूसरा सिरा धातु के टुकड़े से मिला होता है। इस मशीन का सम्बन्ध बैटरी के तारों से होता है। जब तक बटनवाला सिरा दबाया नहीं जाता, विद्युत्-वृत्त पूरा नहीं होता है। बटनवाले सिरे को दबाते ही विद्युत्-वृत्त पूरा हो जाता है, तार के खम्भों द्वारा बिजली खबर लेनेवाले यंत्र में पहुँचती है और वहाँ से पृथ्वी द्वारा होकर पुनः बैटरी में वापस आ जाती है। बटन के दबाते ही विद्युत के कारण Receiver के चुम्बक में आकर्षण-शक्ति आ जाती है और लोहे की पत्तीवाले सिरे को खट की आवाज के साथ खींच लेता है। जब Key (खबर भेजनेवाला यंत्र) बोर्ड पर बैठ कर बार-बार दबाया जाता है, तब इसकी प्रतिक्रिया खट-खट की आवाजके साथ Receiver पर होती है।

टेलीग्राफ में शब्द एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं पहुँचते हैं, वरन् खट-खट की आवाज दूसरे स्थान पर अर्थात् Receiver पर पहुँचती है। खट-खट के शब्द से मोर्स ने संकेत लिपि बनाई जिससे अच्छी तरह से समाचारों का आदान-प्रदान हो सकता है। पर इसमें संकेत भेजनेवाला और लेनेवाला दोनों ही अनुभवी होने चाहिए नहीं तो अर्थ का अनर्थ हो सकता है। मोर्स के संकेत डाट और डैश द्वारा चलते हैं। डाट और डैश से अक्षर बनते हैं और अक्षरों से वाक्य बना लिया जाता है। मोर्स के कुछ संकेत इस प्रकार हैं :—

A·····, B—···, C–·—·, D—·, E·, F··—·, G···, I··K,–··M– –आदि। अब नवीन यंत्रों में डाट और डैश की भी आवश्यकता नहीं पड़ती है। चुम्बक के ऊपर की लोहे की पत्ती का, जिसे आर्मेचर कहते हैं, सम्बन्ध रोशनाई के पहिये से कर दिया जाता है और उसके नीचे कागज लगा दिया जाता है। संकेत के चिह्न कागज पर स्वयं बनते रहते हैं। टाइप मशीन से भी खबर भेजी जाती हैं। अपने देश में इसका प्रदर्शन लगभग १४ वर्ष पूर्व

हुआ था । समाचार भेजने के क्षेत्र में बहुत उन्नति हो चुकी है । टेलीप्रिंटर द्वारा स्वयं-काम होता रहता है । समाचार आदि टेलीप्रिंटर पर अपने-आप टाइप होते रहते हैं । टेलीग्राफ द्वारा तो सिर्फ संकेत ही भेजे जाते हैं पर टेलीफोन द्वारा स्वयं बात कर और दूसरे की बात सुन सकते हैं । टेलीविजन द्वारा बातचीत भी कर सकते हैं और एक दूसरे को सिनेमा की भांति देख भी सकते हैं ।

पहले तार भेजने का बहुत अधिक खर्च था, परन्तु धीरे-धीरे इसका उपयोग बढ़ता गया और अधिक मनुष्यों के उपयोग करने के कारण प्रति व्यक्ति खर्च कुछ कम पड़ गया । बाद में सरकार ने व्यावसायिक कम्पनियों के हाथ से इसे अपने अधिकार में कर लिया और तब से तार की दर बहुत कम हो गयी है । भिन्न-भिन्न देशों में तार की दर भिन्न-भिन्न है, पर अपने देश में एक ही दर है । इस देश में किसी भी स्थान के लिए ८ शब्दोंवाले तार का तेरह आने पड़ता है और इसके ऊपर प्रति शब्द एक आना और देना पड़ता है । एक्सप्रेस तार की दर दूनी अर्थात् एक रुपया दस आने हैं और बाद में प्रति शब्द दो आने की दर से देना पड़ता है । प्रेसवालों के लिए बहुत ही कम दर है; क्योंकि उन्हें तार से बहुत अधिक काम पड़ता है । इनके समाचार भी शीघ्र ही भेज दिये जाते हैं । तार से मनीआर्डर भी भेजा जाता है । इसमें तार और मनीआर्डर दोनों की दरें देनी पड़ती हैं, पर रुपया उसी दिन मिलनेवाले को मिल जाता है । पृथ्वी के ऊपर से जो तार लगे हैं, उन्हें टेलीग्राफ कहते हैं । पर समुद्र के पार के देशों से भी सम्बन्ध बनाये रखने के लिए समुद्रों में भी तार बिछा दिये गये हैं । इन्हें केबुल कहते हैं । इनके द्वारा भेजे गये समाचारों को टेलीग्राम की तरह से 'केबुलग्राम' कहते हैं । जहाजों पर से समाचार रेडियो द्वारा भेजते हैं, जिसे 'रेडियो टेलीग्राम' कहते हैं । पहले बेतार के तार से भी समाचार भेजा जाता था, पर अब रेडियो का अधिक प्रयोग होने लगा है । तार द्वारा फोटो भी भेजा जाने लगा है; इसे 'फोटो टेलीग्राम' कहते हैं । फोटो टेलीग्राम सर्विस जून १९४३में लन्दन और बम्बई के बीच प्रारंभ हुई थी । भारत में सबसे पहले तार के खम्भे कलकत्ता और डायमंड हार्बर के बीच सन् १८५१ में लगे थे । भारतवर्ष और इंगलैंड का तार द्वारा सम्बन्ध २७ जनवरी सन् १८६५ में हुआ था और अब तो भारतवर्ष का सम्बन्ध सभी देशों से है ।

१९४९—स्वतंत्रता के द्वितीय वर्ष की समाप्ति पर ऐतिहासिक चित्रोंवाले टिकट निकाले गये (१५ अगस्त सन् १९४९)।

१९५०—२६ जनवरी को नया विधान लागू हुआ, जिसके उपलक्ष में स्वतन्त्रता के टिकट छपे।

टेलीग्राफ से संकेत ही भेजा जा सकता है, संकेत भेजने और उसको समझने वाला दोनों ही काफी अनुभवी होने चाहिए। अनुभवहीन होने से अर्थ से अनर्थ लगने की अधिक सम्भावना रहती है। मनुष्य सदैव ही सुविधा की खोज में रहा है। इसलिए वैज्ञानिक इस बात के प्रयत्न में लगे रहे कि किसी भाँति मनुष्य का वास्तविक शब्द दूसरे स्थान पर सुनाई दे सके। ग्रेहम बेल ने सन् १८७५ में एक ऐसे यंत्र का आविष्कार किया जिससे दूर की बातें हम घर बैठ ही सुन सकते थे। इस यंत्र का नाम 'टेलीफोन' रखा गया। टेलीफोन दो शब्द से मिलकर बना है। टेली+फोन=टेलीफोन। टेली शब्द का अर्थ है दूरी से या दूरी पर और फोन का अर्थ है, दूर का शब्द। टेलीफोन के आविष्कार से समाचार-पत्र और व्यापारिक संसार में नये युग की सृष्टि हुई। संदेश-परिवाहन को नवीन-जीवन प्राप्त हुआ। आज संसार में करोड़ों टेलीफोन लगे हुए हैं और इनकी संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। घर बैठे ही पास-पड़ोस के मित्र अथवा व्यापारी से सभी प्रकार की बातचीत अत्यन्त सरलता से की जा सकती है। प्रारंभ में टेलीफोन दो-तीन मील की दूरी तक कार्य करता था पर अब सैकड़ों-हजारों मील की दूरी की आवाज इससे भलीभाँति सुनी जा सकती है।

टेलीफोन की व्यवस्था ठीक बनाये रखने के लिये बहुत बड़े कर्मचारियों के विभाग की आवश्यकता होती है। बड़े-बड़े नगरों में जहाँ टेलीफोन हैं, टेली-ग्राफ की भाँति टेलीफोन का भी एक अलग आफिस कार्याधिक्य एवं ठीक ढंग से कार्य करने के लिए रखना पड़ता है। किसी को टेलीफोन करने के लिए टेलीफोन आफिस से जिसे एक्सचेंज (Exchange) कहते हैं, सहायता लेनी पड़ती है। एक्सचेंज (Exchange) से हम नम्बर माँगते हैं और वह जब हमें नम्बर देता है तो हम बात कर पाते हैं। विज्ञान की प्रगति ने इस बात को प्रायोगिक रूप दे दिया कि बिना एक्सचेंज की सहायता से स्वयं ही नम्बर मिला लिया जाय।

इस प्रकार के फोनों में वांछित नम्बर हाथ से अपने टेलीफोन पर घुमा कर लगा दिया जाता है। यदि उस नम्बर का फोन खाली है तो वहाँ घण्टी बजने लगती है अन्यथा एक विशेष प्रकार की आवाज होती है जो इस बात का परिज्ञान कराती है कि वांछित फोन व्यस्त है। यह व्यवस्था बम्बई, दिल्ली, कानपुर आदि बड़े नगरों में है। इसे स्वयंचालित (Automatic) प्रणाली कहते हैं। दूसरे नगरों से टेलीफोन करने के लिए भी Exchange की सहायता अनिवार्य है। दूसरे नगरों को जो टेलीफोन किया जाता है, उसे 'ट्रंककाल' कहते हैं। साधारण ट्रंककाल में घंटों प्रतीक्षा करनी पड़ती है। स्थानीय टेलीफोन के लिए कहीं तो पैसे देने पड़ते हैं, कहीं पैसे नहीं लगते। बनारस में पैसा नहीं देना होता पर कलकत्ते में लगता हैं। परन्तु ट्रंककाल के लिए पैसे देने पड़ते हैं। स्थानीय टेलीफोन के लिए वार्षिक कर देना पड़ता है। वार्षिक कर देनेवालों का नाम और उनका टेलीफोन नम्बर 'टेलीफोन गाइड' नामक पुस्तिका में लिखा रहता है।

हमारे शब्दों द्वारा वायु में कम्पन उत्पन्न होता है। इसी सिद्धान्त को लेकर टेलीफोन का यंत्र बना है। इस यंत्र के दो भाग होते हैं—(१) जिससे बोला जाता है, इसे ट्रांसमीटर या माउथ-पीस (Mouth-piece) कहते हैं। (२) जिसके द्वारा सुना जाता है, इसे रिसीवर (Receiver) कहते हैं।

Transmitr and Receiver—ट्रांसमीटर कटोरी की तरह गोलाकार होता है। इसके पेंदे में लचीले कोयले का एक पतला-सा ढक्कन (Diaphragm) होता है। ढक्कन के पीछे थोड़ी-सी खोखली जगह होती है, और इस जगह में कोयले के महीन-महीन टुकड़े (Carbon Granules) भरे होते हैं। इसके बाद एक कठोर कोयले का ढक्कन (Carbon Diaphragm) होता है, जिसके दोनों सिरों पर रूई की गद्दी लगी होती है। कठोर कोयले का विद्युत से सम्बन्ध करने के लिए लोहे का स्क्रू लगा होता है, जिसका सम्बन्ध बिजली के तार से होता है। रिसीवर के अन्दर एक विद्युत-चुम्बक (Electro-magnet) होता है जिसके सिरे पर मुलायम लोहे का ढक्कन (Diaphragm) लगा होता है। इस ढक्कन का सम्बन्ध विद्युत-तार

से होता है । पहले के टेलीफोनों में ट्रांसमीटर और रिसीवर दोनों ही अलग-अलग होते थे पर अब के चोंगों में दोनों ही बने होते हैं । पहले दोनों हाथ लगाने पड़ते थे, पर अब एक हाथ से ही काम हो जाता है । जब हम ट्रांसमीटर से बोलते हैं तो उसमें कम्पन उत्पन्न होता है, जिसे अन्दर का पतला ढक्कन (Carbon Diaphragm) बिजली की लहरों में परिवर्तित कर देता है । यह बिजली की लहर तेजी से दूसरे स्थान पर अर्थात सुनने वाले के पास पहुँच जाती है, तो वहाँ वह इसे अपने रिसीवर द्वारा सुन लेता है । रिसीवर के कम्पन हमारे कानों के पर्दों तक पहुँच जाते हैं और इस तरह हमें मनुष्य का स्वाभाविक शब्द सुनायी पड़ने लगता है । परिचित की आवाज स्पष्ट ज्ञात हो जाती है । हँसी और खाँसी आदि भी स्वाभाविक प्रकार से सुनाई देती हैं ।

बहुत से टेलीफोनों में इस सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ती । टेलीफोन के यंत्र के साथ एक Dial लगा होता है जिस पर एक से नौ तक अंक बने होते हैं । किसी भी अंक पर उँगली लगा कर घुमाने से वह रुकने के स्थान तक घूम जाता है और छोड़ देने से फिर अपने स्थान पर वापस आ जाता है । इसको स्वयं-चालित यंत्र (Automatic connection) कहते हैं । यदि हमें किसी ऐसे व्यक्ति को टेलीफोन करना है जिसके यहाँ टेलीफोन लगा हुआ है तो हमें उस आदमी का नम्बर टेलीफोन गाइड की सहायता से मालूम करना होगा । Dial पर उसका नम्बर घुमाया जायगा, तो उसके यहाँ एक घंटी बजने लगेगी और दूसरा व्यक्ति समझ जायगा कि कोई उससे बात करना चाहता है । यह सुविधा सिर्फ स्थानीय टेलीफोनों के विषय में है । पर जब यह ट्रंक काल करना होगा अर्थात् किसी दूसरे नगर वाले से बात करनी होगी तो टेलीफोन के Exchange विभाग की सहायता लेनी ही पड़ेगी ।

आधुनिक युग में जब कि जीवन के सभी क्षेत्रों में गति और समय की होड़ है, टेलीफोन की उपयोगिता बहुत बढ़ गयी है । व्यवसायी बाजार भाव की खबर चाहता है । शासक इसका उपयोग शासन-संचालन के कार्य में करते हैं । और उच्च कर्मचारियों एवं पत्रों के कार्यालयों की टेलीफोन की घंटी तो बराबर व्यस्त रहती है । कहीं कोई भी आवश्यक कार्य हुआ कि घंटी टनाटन

१०

बेतार का तार

मनुष्य सामाजिक प्राणी है अतः वह समाज से अपना सम्बन्ध बनाये रखने के लिए अपने समाचार उस तक पहुँचाता है तथा उसके समाचार स्वयं जानना चाहता है। पहले यह कार्य सन्देशवाहकों के द्वारा होता था किन्तु मानव के ज्ञान विकास के साथ-साथ इसके साधनों में भी परिवर्तन हो गया और आज केवल डाक और तार के द्वारा ही नहीं प्रत्युत बिना तारों के भी समाचार एक स्थान से दूसरे स्थान तक ज्यों के त्यों भेजे जाने लगे हैं। वायरलेस (Wireless) वास्तव में विज्ञान की वह शाखा है जिसके द्वारा बिना बिजली के तारों की सहायता के समाचार एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाये जाते हैं। इसके दो भाग हैं—१—बेतार का तार (Wireless Telegraphy) २—बेतार का टेलीफोन (Wireless Telephony)।

सन् १८६७ ई० में जेम्स क्लर्क मैक्सवैल (James clerk Maxwell) नामक एक अंगरेज वैज्ञानिक ने केवल गणित द्वारा यह बताया था कि विद्युत कि विद्युत तरंगें भी प्रकाश की तरंगों की भाँति उसी गति से दौड़ सकती हैं। १८८७ ई० में इसी विचार को हेनरिच हर्ट्‌च (Heinrich Heartz) नामक एक जर्मन वैज्ञानिक ने कार्य रूप में बदल दिया। उसने विद्युत चिन्गारी से विद्युत तरंगें उत्पन्न कीं और साथ ही यह भी सिद्ध किया कि यह तरंगें प्रकाश तरंगों के समान सरल रेखाओं में १,८६,००० मी० प्रति सेकेवण्ड की गति से चलती हैं और उन्हीं के समान परावर्तित (Reflect), नाभ्यंतरित (Focussed) और बाधित (Obstruct) की जा सकती है। सन् १८९५ ई० में इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर जी० मार्कोनी नामक एक इटैलियन वैज्ञानिक ने एक

ऐसा यन्त्र बनाया जिससे विद्युत तरंगें दूर तक भेजी जा सकती थीं। तभी स Wireless संसार के सामने आया। तब से वायरलेस के यन्त्र में निरन्तर अनेकों सुधार होते रहे हैं। आज कल वायरलस का तरीका नीचे लिखे अनुसार है:—

जिस स्थान से हमें समाचार भेजना होता है वहाँ एक यन्त्र, जिसे ट्रांसमीटर (Transmitter) कहते हैं, रहता है। जिसमें शक्तिशाली वाल्व (Valve)
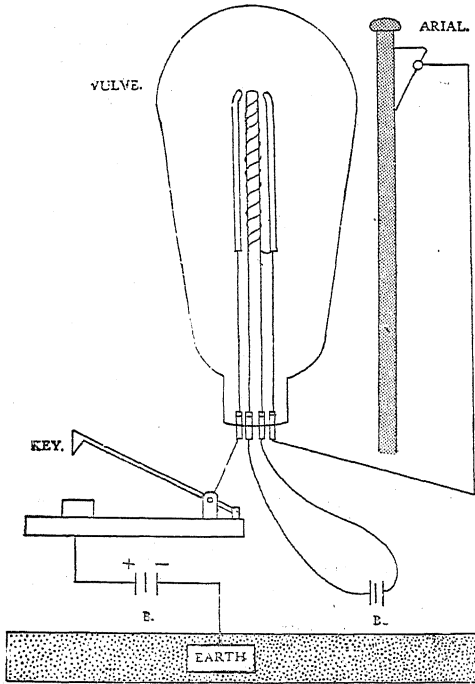
होता है जो आवाज को बढ़ाकर (Amplify) एरियल (Aerial) तक पहुँचाते हैं। जब हम Key को दबाते हैं तो इन वाल्वस और एरियल का सम्बन्ध

हो जा ता है और लगातार तथा नियमित रूप जाने वाली विद्युत तरंगें Continues and regulated waves) ईथर में जाने लगती हैं । और जब हम Key को हटा लेते हैं तो यह सम्बन्ध समाप्त हो जाता है और विद्युत तरंगों का जाना रुक जाता है । Key का कम और अधिक देर तक दबाना और हटाना Dot और Dash की आवाजें पैदा करता है । दूसरे स्थान पर जहां हमें यह समाचार सुनना होता है हम एक दूसरे यन्त्र का प्रयोग करते
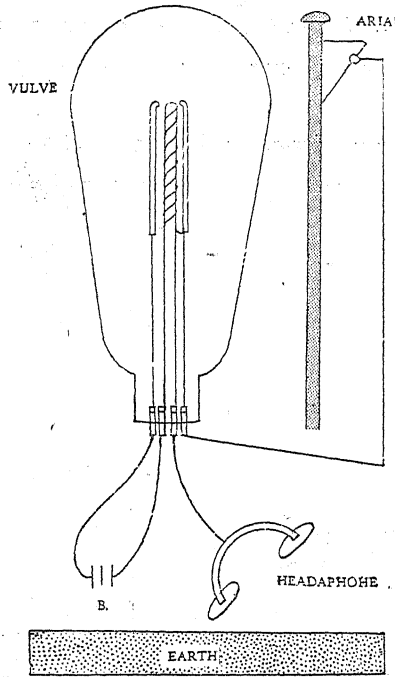
हैं जिसे Receiving Set कहते हैं । जब दे कर बाल्व से Amplify विद्युत तरंगें यहां के एरियल से टकराती हैं तो हम अपने यन्त्र के द्वारा उन्हें पकड़

करते हैं और Head-phone में उन्हीं Dot और Dash की आवाजों को सुनकर Morse Code के अनुसार अपनी भाषा में बदल लेते हैं। दिये गये चित्रों से इनकी क्रिया भलीभाँति स्पष्ट हो जावेगी।

लाभ--

१--युद्ध के दिनों में अथवा अन्य emergencies पर प्रायः ऐसा होता है कि सरकार को अपने गोपनीय समाचार शीघ्र से शीघ्र भेजना पड़ता है। इस कार्य के लिए वायरलैस से अधिक उत्तम और कोई साधन नहीं है। क्षण भर में समाचार दूर नगरों तक पहुँचाये जा सकते हैं और Code language में होने के कारण उनकी गोपनीयता भी बनी रहती है।

२--समुद्र के बीच में जानेवाले जहाज अपना सन्देश बन्दरगाहों पर इसी के द्वारा पहुँचाते रहते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर वहाँ से सहायता भी प्राप्त कर लेते हैं। यदि वायरलेस न हो तो अनेकों जहाज बिना किसी सहायता के प्राप्त किये ही डूब जाया करें और सहस्रों प्राणियों की जानें जाया करें ऽ

३--वायुयान को भी मौसम की अच्छाई और बुराई का समाचार इसी के द्वारा दिया जाता है जिससे वे नीचे उतर आते हैं।

बेतार का टेलीफोन
Wireless Telephony

बेतार के टेलीफोन और बेतार के तार में सिद्धान्त रूप से तो कोई अन्तर नहीं है। बेतार के तार में तो केवल Dot और Dash की आवाजें बिजली की लहरों के द्वारा भेजी जाती हैं और बेतार के टेलीफोन में संगीत, व्याख्यान आदि सब ज्यों के त्यों भेजे जाते हैं। जिस स्थान से यह संगीत या व्याख्यान प्रसारित किये जाते हैं उन्हें Broadcasting Station कहते हैं।

Broadcasting Station पर दो कमरे होते हैं। एक में गानेवाला या व्याख्यान देनेवाला Microphone के सामने गाता या व्याख्यान देता है। इस कमरे को Studio कहते हैं। चूंकि आवाज की लहरों की चाल १,१२० फीट प्रति सेकेंड है और बिजली की चाल (Electro-Magnetic

Waves) १,८६,००० मी० प्रति सेकेण्ड है। अतः अपनी आवाज को एक सेकेण्ड में हजारों मील दूर पहुँचाने के लिए आवाज की लहरों को बिजली की लहरों में बदलना पड़ता है। यह कार्य Microphone करता है। बोलने वाले की आवाज को यह बिजली की लहरों में बदलकर एक दूसरे कमरे में जहां ट्रांसमीटर होता है, भेज देता है। इस यंत्र के द्वारा लगातार बहने वाली विद्युत तरंगें, जो बाल्वस् की सहायता से बहुत अधिक कंपनांक (Very high frequency) पर उत्पन्नकी जाती है। आवाज की तरंगों से मिलाकर (Modulation) एरियल के द्वारा आकाश में पहुँचा दी जाती है। यह तरंगें आकाश (Ionsphere) और पृथ्वी के मध्य लगातार परावर्तित (Successive refiection) होती हुई आगे बढ़ती जाती हैं। यदि ऐसा न हो तो भारत में रहने वाला आदमो, पृथ्वी गोल होने के कारण, अमेरिका के आदमी की आवाज नहीं सुन सकता।

यही विद्युत तरंगें जब Receiving Stationके एरियल से टकराती हैं तब हमरा Receiving Set जिसे हम Radio कहते हैं इनमें से इच्छानुसार तरंगों को खींच लेता है। उसके बाद इन तरंगों को वाल्व के द्वारा परावर्थित (Amplify) कयिा जाता है। साथ ही Electro-Magnetic Waves को समाप्त करके केवल Sound Waves को निकाल लिया जाता है। जिसमें से फिर नीचे की ध्वनि तरंग को समाप्त कर देते हैं क्योंकि यदि यह Rectification न किया जाय तो दोनों ओर विरुद्ध धाराएँ होने के कारण कोई आवाज सुनाई न दे। अब यह ध्वनि तरंगें पुनः Amplify करके Megaphone में भेजी जाती हैं जो इन Sound Electric Vaves को Sound में परिर्वातित करके हमारे सामने लाता है।

भारतवर्ष के प्रायः सभी बड़े-बड़े नगरों और बन्दरगाहों पर Bordcasting Stations हैं। विश्व का सबसे अधिक शक्तिशाली Boardcasting Station लन्दन में British Boardcasting Corporation है। साधारणतया प्रत्येक देश में यह कार्य सरकार द्वारा किए जाते हैं। भारत में सर्वप्रथम एक सार्वजनिक संस्था द्वारा यह कार्य होता था किन्तु अब भारत सरकार

ने इसे अपने हाथमें ले लिया है । इस संस्था का नाम All India Radio है। कुछ लोग इसे अखिल भारतीय आकाशवाणी केन्द्र के नाम से भी पुकारते हैं। विभाजन के उपरान्प Pakistan Radio नामक एक अलग संस्था स्थापित हो गई है जो पाकिस्तान के सभी Radio Stations की देखभाल करती है । भारतवर्ष में निम्नांकित स्थानोंपर Boardcasting Stations हैं-

१. देहली--All India Radioका Head Office यही है । १९४३ ई० में इसकी स्थापना हुई ।

२. लखनऊ

३. इलाहाबाद--१८ फरवरी सन् १९४९ ई० को खोला गया ।

४. अहमदाबाद--१६ अप्रैल सन् १९४९ ई० को खोला गया :

५. मद्रास--१६ मई १९२४ ई० को इन्डियन ब्राडकास्टिग कम्पनी ने खोला यही भारत का प्रथम रेडियो स्टेशन है ।

६. कलकत्ता--२३ जुलाई १९२७ को खोला गया ।

७. बम्बई

८. नागपुर

इनके अतिरिक्त जालन्धर, पटना, ट्रावनकोर आदि स्थानों पर भी हैं ।

लाभ--

१. दूर देशों की बातें क्षण भर में घर बैठे मालूम हो जाती हैं ।

२. विश्व के राष्ट्रों में एकता स्थापित करने का साधन है ।

३. किसी एक व्याख्यान को चाहे वह कहीं भी हो रहा हो हर व्यक्ति बड़ी सरलता से सुन सकता है ।

४. शिक्षा और ममोरंजन के लिए भी यह एक अत्यन्त उत्तम साधन है ।

११

भारत की पंचवर्षीय योजना

तथा

परिवाहन

सरकार ने भारत के नव-निर्माण के लिए एक पंचवर्षीय योजना बनायी है जिसका मूल उद्देश्य भारत का सभी क्षेत्रों में संतुलित कल्याण है। नास योजना के अन्तर्गत सभी क्षेत्रों के विकास का उपक्रम किया कया है। इसके अन्तर्गत परिवाहन के विकास की भी योजना उपस्थित की गयी है जिसकी संक्षिप्त तम रूप रेखा नीचे प्रस्तुत की जा रही है।

परिवाहन और संचार के प्रोग्राम में कुल हए खर्च का बड़ा भाग रेलों पर लगेगा। रेलों की सबसे बड़ी जरूरत साज-सामान प्राप्त करने और टूटे-फूटे साज-सामान की जगह नया चालू करने की है। विदेशी निर्माताओं से छुटकारा पाने के लिये केन्द्रीय सरकार ने १५ रुपये की लागत से चितरंजन में एक कार-खाना भी चालू किया है जहाँ जल्दी ही एक ईजन प्रति सप्ताह बनने बनने लगेगा। सरकार ने टाटा लोकोमोटिव इंजीनियरिंग कम्पनी को भी धन की सहायता दी है। रेलवे योजना पर कुल ४०० करोड़ रुपये खर्च होंगे जिनमें से केन्द्र से ८० करोड़ दिये जायेंगे और बाकी रेलें अपने साधनों से पूरा करेंगी।

जहाजरानी के लिये विकास प्रोग्राम के अनुसार १९५५-५६ तक विदेशी और समुद्री किनारे के व्यापार के लिये लगभग ६,००,०० टन के रजिस्टर्ड जहाज काम करने लगेंगे। योजना में जहाजी कम्पनियों को जहाज खरीदने के लिये १५ करोड़ के कर्ज़ की सिफारिश की गई है। बन्दरगाहों के विकास के बारे में में भी सिफ़ारिश की गई है। जल्द ही कांडला बन्दरगाह भी काम करने लगेगी और जो माल पहले कराची में जाता था, वह काँडला से जाने लगेगा। काँडला पर करीब १२ करोड़ रुपया खर्च आयेगा।

पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय सड़कों के विकास, जो सड़कें बन रही हैं उन्हें पूरा करने, ४५० मील लम्बी नई सड़कें बनाने और छोटे-छोटे बहुत से पुलों के अलावा ४३ बड़े पुल बनाने की व्यवस्था है। केन्द्रीय सरकार की योजना में पांच वर्षों के अन्दर २७ करोड़ रुपया खर्च होगा। इसके अलावा और रुपया भी सड़कों पर खर्च किया जायगा।

शहरी हवाई जहाज यात्रा एक नया क्षेत्र है। यह देखा जाना है कि इसमें काम करने वाली कम्पनियां मुनाफे के साथ काम नहीं कर पातीं। इसलिये इनको एक यूनिट में मिला देने की सिफारिश की गई है और कम्पनियों को मुआवज़े देने तथा नये हवाई जहाज़ खरीदने के लिये साढ़े नौ करोड़ रुपये की व्यवस्था है।

डाक, तार और टेलीफोन के विकास प्रोग्रामों पर ५० करोड़ रुपया खर्च किया जायगा। इस प्रोग्राम में २,००० या इससे अधिक आबादी वाले हरेक गांव में एक डाकखाना खोलने और बड़े शहरों मे टेलीफोन की सुविधा बढ़ाने पर ज़ोर दिया गया है।

पिछले कुछ दिनों से विदेशी व्यापार में काफ़ी घट-बढ़ होती रही है। विदेशों से अधिक अन्न मँगाने के कारण व्यापार का ताल-मेल ठीक नहीं रहा। योजना में इन बातों का काफी ध्यान रखा गया है। खेती की उपज बढ़ने से विदेशों का सहारा खत्म हो जायगा। रुई और पटसन की पैदावार बढ़ने से इनकी बनी बनी वस्तुओं को और अधिक बाहर भेजा जा सकेगा। सीने की मशीनों, साइकिलों, बिजली के पंखों आदि का नया निर्यात होने लगेगा। दूसरी ओर विकास के इतने बड़े प्रोग्राम में आयातों का बढ़ जाना और विदेशी मुद्रा की कमी एक ज़रूरी बात है। इसलिये हमें यह ध्यान रखना है कि कहीं बढ़ते हुए आयात और विदेशी मुद्रा की कमी हमारी योजना पर बुरा असर न डालें। हमें अपनी निर्यात नीति यह ध्यान में रखते हुए बनानी होगी कि यह योजना में रखे गये उत्पादन और खपत के लक्ष्यों को पूरा करने में मदद दे, निर्यातों का ऊँचा स्तर बना रहे और देश को विदेशी मुद्रा की कमी न पड़े और दूसरे देशों से ऐसे व्यापार सम्बन्ध बने रहें जिससे हमारे उद्योग और व्यापार खूब पनपें।